तृतीय अध्याय

भारतीय साहित्य में नारी

* **प्रस्तावना**

3.1 विभिन्न युगों में नारी की स्थिति

(3.1.1) प्राचीन काल या प्रागैतिहासिक काल में नारी

(3.1.2) वैदिक काल में नारी

(3.1.3) उत्तर वैदिक काल में नारी

(3.1.4) उपनिषद काल में नारी

(3.1.5) स्मृति काल में नारी

(3.1.6) रामायण एवं महाभारत काल में नारी

(3.1.7) पौराणिक काल में नारी

(3.1.8) बौद्ध काल में नारी

(3.1.9) राजपूत काल में नारी

(3.1.10) मध्यकाल में नारी

(3.1.11) आधुनिक काल या ब्रिटिश काल में नारी

(3.1.12) स्वातंत्र्योत्तर काल में नारी

(3.1.13) संस्कृत साहित्य काल में नारी

3.2 भारतीय वर्तमान समाज में नारी का क्षेत्र

(3.2.1) आर्थिक क्षेत्र में नारी

(3.2.2) राजनीतिक क्षेत्र में नारी

(3.2.3) सामाजिक क्षेत्र में नारी,

(3.2.4) सांस्कृतिक क्षेत्र में नारी

(3.2.5) धार्मिक क्षेत्र में नारी

(3.2.6) शिक्षा के क्षेत्र में नारी

(3.2.7) कार्य क्षेत्र में नारी

(3.2.8) परिवार के क्षेत्र में नारी

(3.2.9) विवाह संस्था के क्षेत्र में नारी

(3.2.10) वैयक्तिक क्षेत्र में नारी

3.3 भारतीय परिवेश में नारी

(3.3.1) ग्रामीण परिवेश में नारी

(3.3.2) नगरीय परिवेश में नारी

3.4 नारी की अवधारणा

3.5 भारतीय समाज में साहित्य, जीवन और नारी

3.6 भारतीय हिन्दी साहित्य में नारी विषयक दृष्टिकोण

(3.6.1) हिन्दी साहित्य में पारंपरिक दृष्टिकोण से नारी

(3.6.2) हिन्दी साहित्य में आधुनिक दृष्टिकोण से नारी

3.7 हिन्दी कथा साहित्य में नारी

(3.7.1) हिन्दी काव्य साहित्य में नारी

(3.7.2) हिन्दी नाटक साहित्य में नारी

(3.7.3) हिन्दी उपन्यास साहित्य में नारी

(3.7.4) हिन्दी कहानी साहित्य में नारी

(3.7.5) अन्य हिन्दी साहित्य में नारी

(3.7.6) प्रवासी महिला कथाकारों के साहित्य में नारी

(3.7.7) महिला कथाकारों की दृष्टि में नारी

3.8 महीप सिंह की कहानियों में नारी के परिपेक्ष में उनके विचार

* **निष्कर्ष**

* **संदर्भ ग्रंथ-सूची**

तृतीय अध्याय

भारतीय साहित्य में नारी

* **प्रस्तावना**

नारी समाज का अभिन्न अंग है। जगत का निर्माण एवं संचालन करने में नारी की मुख्य भूमिका माना जाता है। नर और नारी दोनी सृष्टि की मूलभूत तत्व है। सृष्टि की रचना में नारी का योगदान अधिक है। नारी का जन्म ईश्वर का वरदान माना जाता है। नारी को नर का आधा अंग माना जाता है। जो अपना परिवार, समाज को जोड़ के रखती है। मनुस्मृति में कहा गया है कि- "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।"**1** सदियों से नारी को एक वस्तु तथा पुरुष की संपत्ति समझा जाता रहा है। पुरुष नारी को पीट सकता है उसके दिल और शरीर के साथ खेल सकता है। नारी की श्रेष्ठता एवं स्त्री-पुरुष की पूरकता का विश्लेषण करते हुए हो बल्लभदास तिवारी ने लिखा है कि- "पुरुष सत्यम है, प्रकृति शिवम और सुन्दरम है, अतः स्पष्ट है कि प्राणीमात्र के जीवन में नारी की भूमिका पुरुष की अपेक्षा दोहरी है। प्रकृति पुरुष की चितवृतियों की संचालिका है, यह विराट शक्ति की शाश्वत प्रेरणा स्रोत है वह उसका उदगम है।"**2** नारी की श्रेष्ठता को बताते हुए महात्मा गांधी ने कहा है- "स्त्री को अबला कहना उसका अपमान है। यदि शक्ति का अभिप्राय पाशविक शक्ति से है तो स्त्री सचमुच पुरुष की अपेक्षा कम शक्तिशाली है। यदि शक्ति का मतलब नैतिक शक्ति से है तो स्त्री पुरुष से कहीं अधिक शक्तिमान है।"**3**

"जगत में नारी का स्थान आदिकाल से गौरवमय रहा है। नारी पुरुष की पूरक एवं सहयोगी मानी जाती है। नर से नारी का स्थान कहीं बढ़कर है। मैथिलीशरण गुप्त के अनुसार-"एक नही दो-दो मात्राएँ नर से

बढ़कर नारी।"**4** नारी की यह श्रेष्ठता सदैव बनी रही है। समय के साथ-साथ उसकी स्थिति हस्तउल्लास हो जाती है।

"स्त्री-पुरुष संम्बधों में नारी के तीन रूप है। प्रथम स्तर पर नर-मादा सम्बन्ध है दूसरी स्थिति मैं पुरुष-स्त्री सम्बन्ध है और तीसरी स्थिति मनुष्य और मनुष्य के बीच का सम्बन्ध है। नर और मादा का संम्बधों का आधार मानसिकता है। मानव और मानव के बीच की संम्बधों का आधार मानवता है।"**5**

संस्कृति,धर्म एवं सभ्यता के निर्माण में नारी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। नारी आदिम संस्कृति का स्थान है। नारी एक माता, बहन, बेटी, सास, बहू, भाभी, ननंद इत्यादि की भूमिका निभाती है। प्रेरणा और संघर्ष के समन्यय से ही जीवन पूर्ण होता है। इसके संदर्भ में आशारानी बहोरा लिखती है कि- "पुरुष को प्रकृति ने शारीरिक बल अधिक दिया है,तो स्त्री दृढ़ता और शरीर सौंदर्य अधिक पुरुष संसार में घोरा और साहस भरने के लिए बना है, तो स्त्री धैर्य और चरित्र सिखाने के लिए करुणा और प्रेम बसाने के लिए, दोनों की भिन्न प्रकृति से ही परस्पर पुरकता और जीवन की पूर्णता संभव है।"**6** इसी बात को अधिक बताते हुए याज्ञवल्क ने कहा है कि- "जिस प्रकार चने और सीप का आधा दल दूसरे से मिलकर पूर्ण होता है उसी तरह पुरुष के सामने का खाली आकाश नारी के साथ मिलने से पूर्ण होता है।"**7**

भारत की पवित्र भूमि में पार्वती, शतरूपा, अरुन्धती, सावित्री अनुसूया, सीता, सुलोचना, गार्गी, मैत्रेयी, रूसा (चिकित्सा) मीरा, रत्नावली, सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा (साहित्य) आदि महिलाएँ हुई है। वीरांगनाओं में आज भी पिघुल्लता, दुर्गावती, ताराबाई, जीजाबाई, लक्ष्मीबाई, अवन्ती बाई आदि ने भी अपना वर्चस्व स्थापित किया। भारत

की नारियों ने कल अपने घर पर चाहर दीवारी में क़ैद रही अपितु त्याग और बलिदान की साकार मूर्ति बनकर भी प्रेरक शक्ति के रूप में सामने आई। इस प्रकार नारी ने प्रारंभिक काल से ही अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया है।

3.1 विभिन्न युगों में नारी की स्थिति

नारी भारतीय संस्कृत मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जीवन की व्याप्ति को नापा नहीं जा सकता। असंख्य विषय पात्र क्षेत्र उसमें समाविष्ट होते है। नारी की पराधीनता की सामाजिक विकास की प्रक्रिया के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए। स्त्रियां को देवी के रूप में प्रतिष्ठित करना फिर उसका अबला कहलाना और कायरतापूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए, अपनी मुक्ति की कामना और प्रयत्न करने का अध्ययन समाज में हुए, विभिन्न बदलाव और परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में ही सम्भव है। मानवीय भावना और मानसिक क्षमता के स्तर पर नारी पुरुष से भिन्न या निम्न नही है। विभिन्न कालों में नारी की स्थिति ,परिस्थितियों या परिवेश की उपज रही है।

यदि हम देखें तो पाएँगें कि परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम माना जाता है। प्रायः सृष्टि की सभी वस्तुओं में परिवर्तन की प्रक्रिया गतिशील है। समाज में यह परिवर्तन की प्रक्रिया थोड़ी जटिल हो जाती है। यह प्रक्रिया कभी-कभी तीव्र तो कभी-कभी धीमी भी ही सकती है। अतः प्रकृति के इस नियम के अनुरूप समाज में नारी की स्थिति में समय-समय पर बहुत परिवर्तन आया है। भारतीय समाज में प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक नारी की स्थिति में अनेक उतार-चढ़ाव आए जिसे अलग-अलग काल खंडों में विभाजित करके विचलित किया जा सकता है।

(3.1.1) प्राचीन काल या प्रागैतिहासिक में नारी

भारत का इतिहास प्रागैतिहासिक काल से प्रारंभ होता है। 3000 ई. पूर्व तथा 1500 ई.पूर्व के बीच माना जाता है। यह काल का समाज मातृ- सत्तात्मक समाज था। इस काल में नारी का स्थान गौरवमय था। इस काल में माता को समस्त अधिकार प्राप्त थे। कुछ विद्वानों के मतानुसार इस काल में विवाह पद्धति नहीं थी। आशारानी व्होरा के अनुसार - **"**यौन-संबंधों में मनुष्य अर्धमानव, अर्धपशु जैसा था। फिर भी नारी की स्थिति पुरुष के बराबर नहीं उससे श्रेष्ठ थी।**"8** इस काल में ननलोग छोटे-छोटे समूह में रहते थे और सब मिल-जुलकर जीविका के लिए साधन खोजते थे। इस युग में परिवार प्रथा नहीं थी। सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक जीवन में नारी को विशेषाधिकार प्राप्त थे। स्त्री और पुरुष की बीच कोई अंतर नहीं था। वे दोनों श्रम करते थे। इस काल की मूर्तियों के पद पर भी स्त्री को सुशोभित करने के प्रमाण है। वह गृह और संपति की अधिकारी मानी जाती थी। नारी की स्थिति पुरुष के बराबर नहीं मगर इससे श्रेष्ठ थी।- **"**उसकी सृजनशीलता तथा आर्थिक उपादेयता इतने महत्व की थी कि स्वभावतः विवाह संम्बधी नियम अत्यंत शिथिल थे।**"9**

इस तरह नारी की स्थिति संतोषजनक थी। नारी का स्थान समाज में सर्वोच्च था।

(3.1.2) वैदिक काल में नारी

इस काल का समय 1500 से 1000 ई.पूर्व माना जाता है। इस युग में नारी की स्थिति श्रेष्ठ मानी जाती थी। नारी को गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त था। घर हो या समाज नारी को हर जगह सम्मानजनक दर्जा प्राप्त

था। इस युग में नारी को सर्वोच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। आशारानी व्होरा के अनुसार - "वेद और शास्त्रों में पारंगत होने के अतिरिक्त वे ऋचाओ की रचना भी करती थी। ऋग्वेद के अनेक सूत्र और मंत्र उस समय की लेखिकाओं-ऋषिकाओं और ब्रह्मपारिणीयों द्वारा भी लिखे गए।"**10** स्त्रियाँ वैदिक शिक्षा के साथ यज्ञ आदि का संपादन कर सकती थीं। वेदों में अनेक जगह लोपामुद्रा, रोमसा, विश्वम्भरा, धोषा, देवयानी आदि नाम मिलते है, जिन्हें विद्वता के आधार पर ऋषिका कहा गया है। इस समाज के पुरुष अर्थात् आर्य अनार्यों के साथ निरन्तर युद्ध में उलझे रहते थे। स्त्रियाँ घर गृहस्थी सम्भालती थी। बाल विवाह प्रथा नही थी और विधवाओं की पुनर्विवाह पर कोई प्रतिबंध नहीं था। नारी को जीवन साथी चुनने की पूर्व स्वतंत्रता थी। इस युग में नारी भी ब्रहमचर्य का पालन कर सकती थी। यहाँ नारी अपने पति की मृत्यु के बाद अपने देवर से विवाह कर सकती थी।

"स्त्रियों को अलग या परदे में नहीं रखा जाता था। वह विद्वान एवं सुसंस्कृत थी। वैदिक युग में सती की प्रथा अज्ञात थी।"**11**

इस तरह हम देख सकते है कि परिवार के सभी कार्यों में और निर्णयों में पत्नी को समान अधिकार था। आर्थिक क्षेत्र में पर्याप्त स्वतंत्रता थी। वैदिक संस्कृति में स्त्रियों पुरुषों की समानधर्मीणी थी। अन्ततः निष्कर्ष रूप से हम यह कह सकते है कि वैदिक काल में नारी की स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी थी। सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में उनका योगदान पुरुषों के बराबर होता था, हाँ पर राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्र में अनेक अधिकार कुछ सीमित थे।

(3.1.3) उत्तर वैदिक काल में नारी

उत्तर वैदिक काल का समय 1000-600 ई.पूर्व का माना जाता है। वैदिक काल में महिलाओं का समाज में जो स्थान उच्च प्राप्त था वह उत्तर वैदिक काल में कुछ कम हो गया था। उत्तर वैदिक काल प्रगतिशीलता का संकेत देता है। इस काल में नारी की स्थिति के भेदपरक विकास का आरम्भ हुआ। इस काल मे किशोरों की तरह किशोरियों के भी उपनयन संस्कार संपन्न किये जाते थे। उन्हें आध्यात्मिक ज्ञान और दर्शनशास्त्र की शिक्षा देना अनिवार्य था। उन दिनों नारी स्वातन्त्र्य की सार्वत्रिक स्वीकृति होती थी। स्त्री को धर्म और समाज के क्षेत्र में पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त थी। राजऋषियों या दार्शनिकों की सभाओं महिलाओं की सफलतापूर्वक भागीदारी होती थी। गार्गी मैत्रयी जैसी विदुषी महिलाएँ इसका उदाहरण है। - **"**इस काल में पुरुष राज्यों को जीतने और उन्हें एक सूत्र में बाँधने में लगे हुए थे, तो स्त्रियों का काम देखने, कपड़ें बुनने तीर-कमान बनाने आदि कामी के साथ घर-गृहस्थी की देखभाल में समय बिताती थी।**"12**

उत्तर वैदिक हिन्दू समाज में पुत्री होने पर पुत्र के समान स्वागत नहीं किया जाता था, क्योंकि वह धार्मिक कार्यों में उपयुक्त नहीं थी। **"**स्त्रियों को वेद पढ़ने व मंत्रोच्चारण के उपयुक्त नही समझा गया था।**"13** पुत्र का स्थान समाज में निःसंदेह उच्च था। परन्तु पुत्री भी उतने ही सम्मान से देखी जाती थी। **"**नारी के ज्ञानार्जन में कोई रूकावट नहीं थी। उत्तर वैदिक काल में लोग विदुषी कन्या की प्राप्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना तक करते थे। विदुषी कन्या के माता-पिता कहलाना गौरव का विषय था।**"14** विवाह संस्कार के समय पर एवं वधू सम्मिलित रूप से अनुवाक मंत्र का उच्चारण करते थे। इससे स्पष्ट होता है कि- **"**कन्या की शिक्षा किसी भी प्रकार से पुत्रों से कम तक नहीं होती थी।**"15** बौद्धायन के

अनुसार - "यदि व्यस्क कन्या का पिता कन्या के ऋतुमति होने से पश्चात तीन वर्ष में कन्या का पति न खोज सके तो कन्या को स्वयं अपना पति चुनने का अधिकार था।"**16** डॉ.पी.पी.कर्णि का विचार है कि- "इस परिवर्तन का कारण स्पष्ट नही है, लेकिन संभव है कि इस समय बौद्ध धर्म का प्रचार हो रहा था, और कन्याओं में भिक्षुणी बनने की प्रवृत्ति बढ़ रही थी। सम्भवत: इस प्रवृति को रोकने के लिए कन्याओं का विवाह कम आयु में किया जाने लगा।"**17**

उत्तर वैदिक काल के अंतिम चरण में दुःखद स्थिति यह थी कि वर्ण व्यवस्था के नियम दिन-प्रतिदिन जटिल होने जा रहे थे। अतः स्त्रियों की स्वतंत्रता कम हो गई थी। आर्थिक दृष्टि से नारी पराधीन होने लगी थी। परिणामत: स्त्रियों के पद में हास्य होने लगा था। उत्तर वैदिक काल से नारी की अवनति प्रारंभ हुई।

(3.1.4) उपनिषद काल में नारी

उपनिषद काल का समय 3000 ई.पूर्व से 3500 ई. माना जाता है। उपनिषदों में नर और नारी की एक तत्व दो नाम माना जाता था, उसे नर की अनुपम सहकारिणी के रूप में देखा जाता था। लेख श्री ब्रजवल्लभशरण जी वेदान्ताचार्य ने कहा है कि- "उपनिषदों में नारी के अंतर्गत उपनिषद काल में नारी के विषय में कुछ इस प्रकार की विचारधारा का वर्णन किया है।यदि नर जीव रूप से विचरण करता है तो नारी बुद्धि बनकर सहयोग देती है। यदि नर दिन बनकर श्रम द्वारा तपता है तो नारी रात्री बनकर उसके श्रम को हरती है। यदि नर मन बनकर संकल्प-विकल्प करता है तो नारी वाणी बनकर उसका समाधान करती है। यदि नर सूर्य रूप बनकर इस जगत को प्रकाशित करता है तो

नारी छौ बनकर उसको अवलम्बन देती है। नर यदि दाता है तो नारी पालिका है। --- नर यदि गृहपति है तो नारी गृहलक्ष्मी है।"**18**

(3.1.5) स्मृति काल में नारी

नारी-स्मृति काल की रचना वेदों की रचना के बाद लगभग 500 ई.स पूर्व हुआ था। इस काल में नारी की स्थिति में और भी गिरावट आई। यह युग में नारी की अवनति हुई। उसकी स्वतंत्रता समाप्त हो गई। विवाह की आयु धरा दी गई। विवाद की आयु आठ नौ साल मानी गई। बालाविवाह करने से नारी शिक्षा से वंचित होने लगी। नारी केवल मातृरूप में आदर पात्र बनी हुई थी। पत्नी के रूप में उसकी प्रतिष्ठा समाप्त हो गई थी। नारी अपना जीवन संकुचित परिधि में विताने लगी। उनकी धार्मिक और सामाजिक स्वाधीनता बहुत कम हो गई और उनका सर्वश्रेष्ठ कर्तव्य घर गृहस्थी और पति की देखभाल माना जाने लगा। सती प्रथा का प्रचलन शुरू हो चुका था। साथ ही विधवाओं की स्थिति बहुत दयनीय थी।

इस काल में सारे अधिकार छिन लिए गए थे। "मनु ने एक ओर लिखा है कि जिस घर में नारी का आदर होता है वहाँ देवता निवास करते हैं दूसरी ओर उसे जन्म से मृत्यु तक पुरुष की आश्रय मे रखा और आचार-संहिता के रूप में अनेकानेक बंधनों से जकड़ दिया।"**19** नारी धीरे-धीरे भोग वस्तु बनकर रह गई। अनेक स्मृतिकारों में नारी को मायाजाल एवं पुरुष की भ्रष्ट करनेवाली माना। स्त्रियों की स्थिति दयनीय बनती गई। सामाजिक परिवेश से कटी हुई वह घर की चार दीवारी में क़ैद हो गई।

अन्ततः हम कह सकते समाज रूढ़िवादिता की दिशा की ओर अग्रसर ही रहा था। नारी को इस काल मे सामाजिक, सांस्कृतिक एवं

धार्मिक समारोहों में उपस्थित होने अथवा भाग लेने की अब, पहले जैसी स्वतंत्रता नहीं रह गई थी। राजनीति से भी अब उनका सम्पर्क नही के बराबर रह गया था। इस समय में नारी को शिक्षित करने की भी आवश्यकता नही समझी जाती थी। परिणामस्वरूप नारी की सामाजिक स्थिति मे लगातार हास्य होता जा रहा था।

(3.1.6) रामायण एवं महाभारत काल में नारी

रामायण काल की न्यूनतम माना जाता है, 8,70,000 पुराना है। महाभारत की रचना 3100-1200 ई.स.पूर्व माना जाता है। इस काल में नारी शिक्षा प्राप्त कर सकती थी। उस समय में पर्दा प्रथा का भी प्रचलन नही देखा गया था। घर में नारी को गृहलक्ष्मी का मान और सम्मान मिलता था। घर के कार्यो में वह पूर्ण रूप से स्वतंत्र होती थी तथा पुरुष उन्हें अपनी अध्द्वागिनी के रूप मे लेते थे। महाभारत में कहा गया था, **"**मृदुभाषी पत्नियाँ सुख में अपने पति की मित्र होती है, धार्मिक कृत्यों के समय वे उनके पिता समान होती है, तथा दुख व कष्ट के समय वे उनकी माता के समान होती है।**"20** इस "प्रकार से हम देख सकते है कि उस समय में नारी की स्थिति अच्छी थी। प्राचीन भारत में ज्यादातर राजतंत्र प्रणाली आई जाती थी। कुछ उदाहरण ऐसे भी देखने को मिलते है, जहाँ स्त्रियाँ अपने पति के साथ युद्ध स्थल मे जाती है। जैसे रामायण में कैकेयी दशरथ के साथ युद्ध मे जाती है। **"**मैगस्थनीज ने भी चन्द्रगुप्त मौर्य के महल मे सशस्त्र महिला अंग रक्षकों का संदर्भ दिया है, कौटिल्य से सुसज्जित सैनिका के रूप में होती थी। अत:जब पुरुषों को ही राजनैतिक अधिकार प्राप्त नहीं थे तब स्त्रियों की अपनी अलग से राजनैतिक परिस्थिति कैसे हो सकती थी।**"21**

धार्मिक क्षेत्र में भी उन्हें पूर्व स्वतंत्रता प्राप्त थी। विवाह के क्षेत्र में भी उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता होती थी। ज्यादातर यह देखा गया था, कि उनका विवाह बराबर की शिक्षित एवं आर्थिक स्थिति वाले वर के साथ किया जाता था।

आर्थिक क्षेत्र में भी यह समस्त अधिकारों से पूर्ण होती थी। उस समय में कृषि कार्य ही प्रमुख रूप से होता था, इसमे वह अपने पति की सहायता करती थी। गृह उद्योग प्रचलित थे, जिनमें वह अपने पति को पूरा सहयोग देती थी।

अत: रामायण और महाभारत काल मे नारी की समाज मे स्थिति अच्छी थी। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में वह काफी हद तक स्वतंत्र होती थी।

(3.1.7) पौराणिक काल में नारी

इस काल में नारी की स्थिति में अपेक्षाकृत कुछ गिरावट आई थी। इस काल में ऐसे बहुत से कारण थे, जिसके कारण नारी की स्थिति में निरन्तर गिरावट हो रही थी। इस काल के आते आते विधवा का निषेध आरम्भ हो गया था। पूर्व यौन परिपक्व विवाह का प्रचलन प्रारम्भ हो चुका था। पति को परमेश्वर माने जाने लगा था। इस युग में नारी को शिक्षित करना जरूरी नहीं माना जाता था, यह देखा गया था, कि उन्हें नहीं पढाया जाता था। सती प्रथा चालु हो गई थी। नारी चाहे या ना चाहे उसे पति की मृत्यु के साथ सती होना पड़ता था। नारी जो मना करती तो वह उसकी ज़बरदस्ती की जाती थी। इस काल में नारी को पर्दे में रखा जाता था, जिससे पडदा प्रथा चालू हो गई थी। बहुपत्नी विवाह भी शुरू हो गया था। इस सभी प्रथा के कारण नारी हास्यपात्र ज्यादा हो गई थी।

इस तरह कर्म-कांडो, जाति प्रथा द्वारा लगाये गये,प्रतिबन्ध, स्त्रियों को शिक्षित नहीं किया जाना, पर्दा-प्रथा, सती प्रथा तथा बहु-पत्नी विवाह जैसी विकृतियों के कारण नारी की स्थिति में निरन्तर पतन हो रहा था। समाज में उन्हें पहले जैसा मान सम्मान नहीं दिया जाता था।

(3.1.8) बौद्ध काल मे नारी

धर्मसूत्रों और स्मृतियों के युग में स्त्री की दशा पूर्णत: पतनोन्मुखं हो गई। स्त्री के साथ भोजन करने वाले पुरुष हो गर्हित आचरण करने वाला व्यक्ति घोषित किया गया। बौद्ध युग में नारी प्राय: शिक्षित और विद्वान हुआ करती थी। ब्रहमचर्य धर्म और दर्शन के प्रति उनकी अगाध रुचि होती थी। थेरीगाथा की कवियित्रियों 32 आजीवन ब्रहमचारिणी और 18 विवाहित भिक्षुणियां थी। साधारण स्त्रियाँ ज्ञान विपाषु थी तथा उसके अन्वेषण और प्राप्ति में तल्लीन रहती थी। इस काल में नारी की स्थिति को सुधारने का प्रयास किया गया धार्मिक क्षेत्रों में नारी को निःसन्देह उत्कृष्ट स्थान पर बैठाया गया। नारी का एक अपना संघ होता था, जिसे भिक्षुणी संघ के नाम से जाना जाता था। उनके इस संघ में उन्ही नियमों और आदर्शों का पालन होता था। बौद्ध धर्म के फलस्वरूप नारी अब फिर से सांस्कृतिक कार्यक्रमों, समाज सेवा तथा सार्वजनिक जीवन में अनेक स्थलों पर भाग लेती हुई देखी जा सकती थी।

हम कह सकते है कि नारी की सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में सम्मान और आधार का स्थान प्राप्त हुआ था, यद्यपि राजनैतिक एवं आर्थिक क्षेत्र मे उनकी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं देखने की मिला था।

(3.1.9) राजपूत काल में नारी

राजपूत काल 12 वी शताब्दी के बाद के उत्तर भारत के इतिहास को राजपूत काल भी कहते है। नारी की स्थिति इस काल में क्रमश:

गिरावट आ गई थी। कन्या का जन्म इस काल के आते-आते घोर निराशा और मातम का सबक बन चुका था। इस समय में समाज मे दहेज़ प्रथा का प्रचलन भी बहुत ज़ोर-शोर से चल रहा था। इसलिए कन्या को जन्म के समय ही खत्म कर दिया जाता था। दहेज़ प्रथा के साथ-साथ बाल विवाह दहेज़ कम करने की चक्कर और अन्य मुश्किलों से बचने के लिये कन्या का विवाह बाल अवस्था में ही किया जाने लगा। इसलिए नारी अशिक्षित या फिर न के बराबर पढ़-लिख सकती थी।

कई बार ऐसा भी पाया गया था कि राजपूत अपनी नारी का आदर सत्कार करते थे तथा प्राय: अनेक मामलों में उनके साथ सलाह भी करते थे। परन्तु यह अपवाद स्वरूप ही देखा गया था। साधारण घरों में ज्यादातर देखा गया था कि नारी की दशा काफी दयनीय थी। धीरे धीरे नारी की पराधीनता बढ़ती ही चली जा रही थी। दामपत्य जीवन में उनका स्तर गिरता जा रह था। उन्हें अब सिर्फ दासी या फिर भोग्या समझा जाता था, जिनका काम सिर्फ गृह कार्य करना उनका मन बहलाना था।

हम कह सकते है कि कुछ राजपूत घरानों में देखा गया था कि नारी की सता थी। उन्हें आदर और सत्कार भी दिया जाता था परन्तु यह अपवाद स्वरूप ही देखा गया था। इस समय में ज्यादातर सामाजिक स्थिति दयनीय थी।

(3.1.10) मध्यकाल मे नारी

मध्यकाल सोलह वी शताब्दी से लेकर 18वी शताब्दी तक का माना जाता है। भारत में जब मुसलमानों का आक्रमण और आगमन हुआ तो नारी की स्थिति में बहुत अधिक गिरावट आई। उसके सभी अधिकार छीन लिए गए। शिक्षा की सुविधा नारी को प्राप्त नही थी। आशारानी ने नारी की स्थिति पर प्रकाश डालते कहाँ है कि “ब्राहमणों ने रक्त की शुद्धता,

स्त्री-सतीत्व की रक्षा और हिन्दू धर्म की रक्षा के नाम पर उसे इतने अधिक सामाजिक बंधनों से जकड़ दिया कि उसके स्वतंत्र अस्तित्व का नामो निशान न रहा।**"22** मुस्लिम आक्रमणों के दौरान लड़कियों के अपहरण ज्यादा मात्र में होने लगे। इस से स्त्रियों की रक्षा हेतु बाल विवाह का प्रचलन जोरों पर चल पड़ा। पर्दा प्रथा का प्रचलन भी जोरों पर हुआ। उसका जीवन घर की चार दीवारी तक सीमित हो गया। उसे निर्णय लेने की स्वतंत्रता न थी। वह एक वस्तु बनकर रह गई। नारी पर अनेक प्रकार की प्रतिबन्ध लगाये गये। पर्दा-प्रथा,, बाल-विवाह, सती-प्रथा जैसी कुरीतियाँ समाज में प्रचलित थी।

नारी न ही अपने आप की आर्थिक रूप से स्वतंत्र कर पाई न ही सामाजिक बन्धनों से मुक्त हो गई। सामाजिक रूप से नारी पर अनेकानेक बंधन लादे गए जिनसे नारी अपने आपको निकाल नहीं पाई वरन् और ज्यादा उन बंधनों में पिसती चली गई। इस काल में नारी की दशा निम्न ही नहीं परंतु शोचनीय ही गई थी।

(3.1.11) आधुनिक काल या ब्रिटिश काल में नारी

आधुनिक कल का आरंभ सम्वंत 1900 (1850 सन्) से माना गया है। 19 वीं शताब्दी के पुर्वोद में भारतीय समाज में नारी की दशा अत्यंत शोचनीय हो चुकी थी। समाज में नारी की स्थिती प्राचीन रीतियों, रुढियों, परंपराओं, छुआछूत के भेद के कारण कद ग़ुलाम से अधिक कुछ भी न थी। भारत में अंग्रेजी राज्य के शासन के समय से आधुनिक या बिटिश काल माना जाता है। अंग्रेजों के आगमन के बाद नारी की स्थिति चिंताजनक हो गई। परिवार बिखर गया। अज्ञानता, गरीबी और शोषण बढ़ता गया। पहले से शोषित नारी अधिक बुरा प्रभाव पडा और वह अधिक पिछड़ गई। देश में नवजागरण का युग प्रारंभ हुआ तब समाज

सुधारको का ध्यान नारी की और केन्द्रित हुआ। उन्होंने महसूस किया कि अंधविश्वास, अज्ञानता और निरक्षरता ही स्त्रियों की समस्याओं का मूल कारण हैं। अंत: समाज सुधारको ने नारी की स्थिति में सुधार लाने की प्रयत्न किए। नारी को जागरूक करना उन्हें सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र में भाग लेने के लिए प्रेरित करना उस समाज की अनिवार्य आवश्यकता थी। इस विषय में राधा कुमार का यह कथन उल्लेखनीय है- "उपनिवेशवादी अर्थव्यवस्था ने अपने विस्तृत प्रशासनिक ढाँचे के अंतर्गत कृषि एवं उद्योग से संबंधित नई नितियों के अनुपालन के लिये उस समय के प्रभावशाली समुहों को मिलाकर एक समाज तैयार हो गया तो इस वर्ग को अपने सुधार की जरूरत महसूस हुई। जात-पांत, बहुदेववाद, मूर्तिपूजा, ढोंग, पर्दा, बाल-विवाह, सती और अन्य कुरीतियों को आदिम और निष्कृष्ट मानते उनके विरुद्व अभियान शुरू किये गये।"**23**

मानवतावादी तथा समानतावादी विचारों के प्रेरित इस समाज सुधारको ने नारी की दशा सुधारने के लिए जो सफल आन्दोलन छेड़े उनमें व्यक्तिवाद तथा समानता के सिद्धांतों के साथ-साथ धर्म की एक नई व्याख्या की थी। विपिनचंद्र पाल ने इस प्रकार लिखा है- "समाज सुधार के आन्दोलन को लगभग धर्म सुधारको का योगदान रहा। कारण यह कि भारतीय समाज के पिछड़ेपन की तमाम निशानियों जैसे जाति प्रथा या स्त्रियों की असमानता को अतीत में धार्मिक मान्यता प्राप्त रही है।"**24**

"पर सदियों से जमी अज्ञानता की कोई को एकदम कैसे मिटाया जा सकता था। प्रगति बहुल धीमी रही है। उन प्रयत्नों में गति तभी आ सकी जबकि २० वी शताब्दी के प्रारंभ से नारी ने स्वयं इस और रुचि प्रदर्शित की और महिला संगठनों ने स्वयं इस कार्य को हाथ में लिया।"**25** आशारानी की शब्द ही है। बाल विवाह, अशिक्षा का विरोध

किया जाने लगा। इस काल में नारी संम्बधी कुप्रथाओं के उन्मूलन का अथक प्रयास जारी हुआ। विधवा पुन:विवाह को स्वीकृति दी गई। नारी संम्बधी प्रगतिशील दृष्टिकोण का सुत्रपात हुआ। नारी जीवन में आए इस परिवर्तन का प्रभाव साहित्य, संस्कृति और समाज जीवन पर भी पड़ा। नारी स्व अस्तित्व के प्रति सचेत होने लगी।

अतः आधुनिक भारत में नारी की शोचनीय स्थिति में परिवर्तन लाने वाले प्रभाव 19 उन्नीसवीं सदी से ही सक्रिय थे। भारतीय विधान में नारी का स्थान महत्त्वपूर्ण रखा गया। इस युग में नारी शिक्षा विधवाओं की दुर्देशा आदि को लेकर साहित्यकारों ने उनके प्रति सहानुभूति करते रचना लिखी। विभिन्न सामाजिक सुधार संस्थाओं के सामूहिक प्रयत्न से ही वैदिक काल के पश्चात् पहली बार नारी को सम्मानपूर्ण अवसर प्रदान किया गया।

(3.1.12) स्वतंत्र्योतर काल में नारी

यह काल का समय 1947 से अब तक का माना जाता है। इस युग में नारी की सामाजिक स्थिति में बहुत परिवर्तन आया। नारी अपने अधिकारों और अस्तित्व के प्रति सजग हुई। भारत सरकार ने भी महिलाओं से किये गये वादो को पूरा करने के अनेक प्रयास भी किये। नारी की उन्नति एवं विकास के लिए अनेक कानून एवं योजनाएं बनाई गई। नारी कि शिक्षा का प्रसार तेजी के साथ हुआ और सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन में भी नारी की भागीदारी तेजी के साथ बढी। आज ऊँचे पदो पर अनेक बुद्धिमती स्त्रियाँ आसीन है इस विषय में प्रमाखेतान का मत है कि- "बहुतेरी नारी ने भी तो बड़ी सफलता से अपनी भूमिका का निर्वाह किया है - इंदिरा गाँधी गोल्ड मायर, मार्गरेट,

मायावती, हिलेरी, विलंटन ..... औरत क्या नहीं कर सकती ? वह फूलन देवी हो सकती है और मेघा पाटेकर भी।**"26**

आज भारतीय नारियाँ यह समझ गई है कि आर्थिक स्वालंबन के बिना यह किसी भी गुलामी से मुक्ति नहीं पा सकती है। नारी को अपने बारे में और क्षेत्र के बारे में पूरी जानकारी है, बल्कि वह अपने से संबंधित कानून की पूरी जानकारी भी रखती है। सरमा मुदगल कहती है कि- **"**सन् 1971 में पहली बार दहेज़ हत्या के खिलाफ दिल्ली की सड़को पर महिलाओं ने रैली की और उप राज्यपाल के दफ्तर के बाहर धरना दिया।**"27**

इस प्रकार हम कह सकते है कि शिक्षा ने जहाँ नारी को अपना बुरा-भला सोचने के लिए एक ठोस ज़मीन और समझ पैदा की है। **"**जहाँ जहाँ स्त्री शिक्षा की दर ऊँची है, वहाँ-वहाँ परिवार नियोजन अधिक अपनाया गया है और स्त्रियों की मृत्यु दर घटी है। इसकें ठीक विपरीत अशिक्षा-पीड़ित स्त्रियों वाले प्रान्तों में स्त्रियों की मृत्यु दर काफी ऊँची है और संतानोत्पत्ति दर भी।**"28**

वर्तमान युग में नारी की स्थिति को देखते हम कह सकते है कि नारी का आन्दोलन अभी समाप्त नही हुआ है। आज भी हमारे देश में रुपकुवँर जैसी स्त्रियाँ सती हो रही है। अत: अनेक बाधाओं के होते हुए भी भारतीय नारी की संघर्ष चेतना और नैतिक गरिमा लगातार तमाम बाधाओं के बावजूद दृढ हो रही है। मैत्रीय पुष्पा इस सदभॅ में लिखती है कि- **"**हम न तो देवी है, न राक्षसी, न साध्वी, न फुलहा हम जो भी है उसी रुप में देखा जाए। पुरुष के नज़रिये से नहीं बल्कि मनुष्य के नज़रिये से। अपना शरीर किसे सोंपना है, माँ बनना है या इस महिमामय गरिमा के मिथ से वचित रहकर भी जिया जा सकता है, लड़की पैदा हो

या लड़का एक हो या दो। ये ऐसी सारी बातें वर्जनाओं और भय से मुक्त होकर स्वयं तक करेगी।"**29** इस प्रकार नारी के लिए नए रास्ते खुले है और सामाजिक, आर्थिक,राजनीतिक जीवन मे उनकी भागीदारी बढ़ रही है।

अत: हम इस प्रकार कह सकते है कि अलग-अलग युगों में नारी की स्थिति में उतार-चढ़ाव आते रहे है। आधुनिक युग में अनेक समाज सुधारकों ने नारी जीवन मे सुधार के लिए प्रयत्न किए और नारी मुक्ति की भावना विकसित की है। अन्य वस्तुओं और जन्तुओं के समान, समाज और संस्कृति के अनेक पड़ावों को पार करते हुए आज नारी अपनी वर्तमान स्थिति को प्राप्त कर चुकी है।

(3.1.13) संस्कृत साहित्य में नारी

संस्कृत साहित्य में भी नारी की माता पिता के घर अधिक रहना मना माना गया था। कालिदास कहते है कि युवतीकन्या पितृगृह रहने से धर्म किर्ती और चरित्र का नाश होता है। कण्यं ऋषि के द्वारा नाटक में स्त्री को परायाधन कहा गया है।

मुसलमानों का आक्रमण, कालांतर से पवनों के आगमन आदि स्थितियाँ बदलती रही। जिसके प्रतिबिंब साहित्य में है कि नारी की स्थिति धीरे-धीरे बदलते हुए दयनीय और शोचनीय बनते गयी। शिक्षा और ज्ञान के अभाव में पुरुषों ने नारी-जाति को नरक द्वारा कहकर लांछित किया। बायबल में भी नारी को अनर्थो की जड़ कहकर अपमानित किया। संत आगस्टिन भी अपने शिष्यों के मन में नारी संबंधी धृणा ही का भाव जगाते रहे। चाहे अपनी माँ क्यों न हो, उसके चारित्रिक दोषों को सजगता से देखना चाहिए, ऐसा वह कहते रहे। अज्ञानी धर्म भावना, जिससे पुरुष को नारी से सतर्क रहने का इशारा किया। भारतीय समाज

में नारी का समयानुसार ढलना पड़ा। पति की सेवा उसका धर्म माना गया उसके लिए यज्ञ, क्षध्धा, उपवास की आवश्यकता नहीं समझी गयी। पुरुष को पाने की लिए नारी उपवास भले ही करे लेकिन कब हमने देखा की स्त्री के लिए पुरुष कुछ त्याग या उपवास कर रहा है ?

3.2 भारतीय वर्तमान समाज में नारी का क्षेत्र

वर्तमान भारतीय समाज के उत्थान में नारी का अप्रतिम योगदान है। स्वतंत्रता पूर्व की नारी को गांधी जी ने समानाधिकार और सम्मान दिलाने का स्तुत्व प्रयास किया और रुढ़िवादी नैतिक दृष्टि की कटु आलोचना की। भारतीय समाज में की नारी पर्दापथा, दाम्पत्य जीवन, पति-पत्नी, विधवा-विवाह, बहु विवाह, अनमेल विवाह, वेश्यावृति, दहेज़ प्रथा, तलाक प्रथा अवैध प्रेम की समस्या, परिवारिक तनाव आदि समस्याओं से दीर्घ काल तक पीड़ित रही है।

समाज में होने वाले परिवर्तन का प्रभाव नारी पर भी विपुल रूप से पड़ता है। नारी जीवन की परिस्थितियों एवं मनोवृतियों का मात्र संघर्ष दिखाकर नही चित्रण कर सकता है। मनुष्य एक समाज का प्राणी है। समाज के बिना उसका अस्तित्व की कल्पना नही की जा सकती। समाज मे रहकर ही मनुष्य का सर्वागीण विकास होता है। समाज सह-अस्तित्य की विकासमान प्रक्रिया है जिसमें मनुष्य आपसी संबंधों के कारण अपने आत्मविस्तार सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए आपस में बंधे रहते है।

डॉ.कुवँरपाल सिंह ने लिखा है कि- **"**समाज की प्रमुख विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उसकी परिभाषा एक ऐसे संगठन के रूप में की जा सकती है जो निरंतर विकसित होता रहता है तथा जिसके प्रमुख कियाकलाप किसी देवी शक्ति पर नही बल्कि उत्पादन प्रणाली के विकास पर आधारित होते है।**"30**

(3.2.1) आर्थिक क्षेत्र में नारी

आर्थिक स्थिति किसी भी देश की नींव मानी जाती है। योजनाबद्ध आर्थिक विकास देश की सामाजिक व्यवस्था तथा प्रगतिशील चेतना को गति प्रदान करता है। किसी समाज में व्यक्ति के स्थान का निर्णय उसकी आर्थिक आमदनी से पता किया जाता है, उसी प्रकार अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में राष्ट्र की स्थिति उसके आर्थिक विकास पर निर्भर करती। इस तरह किसी भी देश की राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्थिति से आर्थिक स्थिति प्रभावशाली बनती है। आर्थिक स्थिति के बिना समाज का निर्मित असंभव माना जाता है।

भारत में औद्योगिक विकास से उच्चवर्ग, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग विकसित हुआ। पूंजीपति के निर्देश पर देश का अर्थतंत्र नाचता है, जो कालाबाजारी, महँगाई, भ्रष्टाचार, तस्करी करता है, तथा गरीबों का और नारियों का शोषण करता है। पहले अंग्रेज और आज पूंजीपति आर्थिक शोषण कर रहे है। भारत में गरीबी दूर करने वाली योजनाओं का लाभ सरकारी कर्मचारी और राजनेता प्राप्त करते है। भारत में बेरोज़गारी की समस्या से युवावर्ग संघर्ष कर रहा है। औद्योगिक और शेहरीकरण के कारण शहरों में भीड़ बढ़ रही है। भारत में जनसंख्या वृद्धि से व्यक्तिगत आय कम हो रही है। **“**हमारी अर्थव्यवस्था में समाजवाद हमेशा नगण्य रहा है और जो हो रहा है, वह भी पूँजीवाद की अतिशयता के लिए हो रहा है।**”31**

वर्तमान भारत में महँगाई की समस्या से जनजीवन त्रस्त है। नारी पारिवारिक आवश्यकताओं पूर्ण करने में असमर्थ है। महँगाई के कारण नारी को भी घर बार छोड़कर काम करने जाना पड़ता है। नारी आर्थिक दबाव के कारण बच्चों को पौष्टिक आहार देने में विवश है। युवतियों के

विवाह में दहेज़ की विकराल समस्या है तथा दहेज़ के अभाव में उन्हें मानसिक और शारीरिक यातनाएँ दी जा रही है। भारत के समाज में नारी तलाक और दहेज़ मृत्यु से सर्वाधिक प्रभावित हो रही है। देश में भोजन, वस्त्र और आवास की समस्या, अर्थ भाव के कारण भयंकर हो गई है। महानगरों में नारी को गन्दी कोठरी में रहने के लिए विवश होना पड़ रहा है।

आर्थिक वैषम्य क अभिशाप समाज में नारी को भोगना पड़ रहा है। आर्थिक रूप से वह पुरुष पर निर्भर है,उसके श्रम का कोई भूल्य नहीं है। उसका राजनीतिक संरक्षण और प्रतिनिधित्व शून्य है। भारतीय स्वतंत्रता के बाद भी नारी को पुरुष के समान संवैधानिक अधिकार प्राप्त नहीं है। पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण हुआ,जिसमे आर्थिक वृद्धि को महत्व दिया गया, किन्तु इन अनुदानों का लाभ नारी को न के बराबर ही मिला। सरकार और स्वयंसेवी संस्थाओं ने महिलाओं के विकास की चर्चा ही नहीं की। देश की अधिकांश नारियों घर तक सीमित रही तथा कुछ महिलाओं को घरेलू कामकाज का प्रशिक्षण मिला। नारी ने जब अर्थ हीनता को दूर करने की लिए घर से बाहर कदम रखा तो उनके सामने दूसरी समस्याएँ उत्पन्न हो गई। आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने वाली नारियाँ पुरुषों से अपेक्षा करने लगी कि बच्चों के निर्णय में उन्हें साझीदार बनाया गया। जब अपेक्षाएँ पूर्ण नही हुई तो पुरुष से टकराव हुआ। ऐसी परिस्थिति में तलाक लेने का कानून बना तथा माँ-बाप की सम्पत्ति में समान अधिकार या पति से भरण-पोषण अधिकार मिला। सन् 1955 में हिंदू विवाह अधिनियम लागू हुआ, तदन्तर नारी की रक्षा हेतु अनेक कानून बनाये गये। कानून ने नारी को सम्पत्ति का अधिकार दहेज़ वापस लेने, इच्छानुकूल विवाह करने, पढने लिखने, वोट डालने समानाधिकार दिये।

भारतीय समाज में ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। महिला श्रमिको के आन्दोलन पर ही सरकार ने प्रसूति अवकाश का लाभ दिया है। स्त्री की स्वाधीनता, समानता, सता में भागीदारी, शिक्षा एवं रोज़गार में समानधिकार, सम्पत्ति में समानधिकार, आर्थिक विकास के लिए संघर्ष समाधान, घरेलू कामकाज, दासता मुक्ति स्त्री को वस्तु मानने की मानसिकता के प्रति संघर्ष आदी नारी के आधार बिन्दु है। यह भी स्पष्ट है कि, ग्रामीण नारी जो डेरी पालन, हथकरधा, कृषि प्रधान कार्य आदि से धनार्जन कर रही है। जवाहर रोज़गार योजना, समेफित ग्रामीण विकास योजना के आधे-अधूरें अनुदानों पर पारंपरिक हुनरो के से बेदखल ही स्थानीय संस्कृति से भी भय सदैव उन्हें घेरे रहता है।

इस तरह समाज व्यवस्था के विभिन्न जैविक,मानसिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, संवैधानिक और आर्थिक आधारो में नारी का निम्नतम स्थान है। मशीनीकरण, भूमण्लीकरण ने बेरोजगार युवक - युवतियों की संख्या में बेहताशा वृद्धि की है। भूमण्डलीकरण का संचालन जी-8, विश्व बाजार संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष एवं विश्व बैंक द्वारा जा रहा है।

(3.2.2) राजनीतिक क्षेत्र में नारी

देश का निर्माण एवं व्यक्ति के उत्थान पतन में राजनीति महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। समान का महत्वपूर्ण अंग राजनीति माना जाता है। वर्तमान राजनीति स्त्री की विविध पहलुओं पर अपनी अमिट छाप छोड़ रही है। समाज की राजनीतिक जीवन तथा प्रशासनिक व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहा है।

पूर्व सभी राजनीतिक दलों का केवल एक ही लक्ष्य था। वे देश को आज़ाद कराना चाहते थे। आज़ादी के बाद त्याग, एवं आदर्श की राह पर चलने वाले नेताओं में परिवर्तन आने लगा। किन्तु यह सच है कि राष्ट्रीय समस्याओं के प्रति जागरुकता लाने के लिए सभी दलों का यह प्रयास रहा है कि भारत वर्ष में लोकतंत्र के सुचारु रूप से चलाया जाना चाहिए।

स्वातंत्र्योतर समाज भारतीय में स्वतंत्रता प्राप्ति के उद्देश्य से मोह भंग हो गया है। नारी इस आज़ादी को सही अर्थों में आज़ादी नही मानती। राजनीति की कूटनीति और वोट नीति से नारी व्यथित है। समाज में आतंकवाद, भ्रष्ट नेतृत्व, वोट की राजनीति,भ्रष्टाचार का परिदृश्य है। नारी इस परिवर्तित आयाम को बदलने की लिए एक अभिनव व्यवस्था खोज रही है। आतंकवाद के कारण सामूहिक नर संहार हो रहा है, तथा राष्ट्र की सम्पत्ति का विनाश हो रहा है। आतंकवाद ऐसा अपराध है, जिससे नागरिकों के सुख शान्ति से जीना मुश्किल हो गया है। नारी भी इस आतंकवाद की समस्या से प्रभावित हुई है। कारगिल युद्ध में शहीद हुए पुरुषों की विधवाओं को एक दु:खद जीवन भोगना पड़ा। राजनीतिक परिवेश नारी को हताश एवं निराश करने वाला है। इससे नारी में मृत्यु बोध और संत्रास निरन्तर बढ़ा है। नारी कही भी सुरक्षित नहीं है।

भारत की राजनीति मात्र सत्ता की राजनीति हैं, जिसका आधार चुनाव होता है। सत्ता में आने का लोभ और सत्ता में बने रहने की आकांक्षा ने दलगत को जन्म दिया है। चुनाव की राजनीति ने वर्ग, धर्म और जाति-निरपेक्ष लोकतंत्रात्मक मूल्य व्यवस्था को संकुचित सीमाओं में केद पर दिया है। स्वतंत्र भारत में अनेक बार चुनाव हुआ है, परन्तु साधारण नारी मतदाता परिवार में पुरुषों की कठपुतली बनकर अपने मताधिकार की आहुति बढ़ा देती है। चुनाव में भ्रष्ट तरीके अपनाएँ जाते

है तथा धनबल, बाहुबल का प्रदर्शन होता है। नारी ने लज्जा और घूंघट का परित्याग कर देश के विकास हेतु राजनीति में सक्रिय भागीदारी प्रारम्भ कर दी है। आज की नारी पुरुषों के अनुरुप मतदान में भाग लेती है। **"**आज़ादी के बाद भारतीय संविधान के प्रावधानों में मताधिकार औरअन्य राजनीतिक अधिकारों में कोई भेदभाव नही रखा गया है। यदि स्त्रियाँ बंधन युक्त हैं, राजनैतिक चेतना का अभाव है तो इसका कारण पिछड़ेपन का नैतिक बंधन है।**"32**

संविधान ने स्त्रियों को समान राजनैतिक अधिकार प्रदान किया है, किन्तु व्यवहारिक दृष्टि से अनेक समस्याएं है। वर्तमान हिंसक राजनीति में नारी आरक्षण कागजी है। राजनीति में वही नारी प्रवेश कर रही है, जो राजनेता के परिवार की होती है तथा पुरुष सत्ता के अधीन रहती है। मैत्रेयी पुष्पा का कथन है कि - **"**अगर महिलाये अपने प्रतिनिधित्व की संरचनाओं को बदलने की कोशिश करेंगी तो मेरा ख्याल है कि वे उपनिवेश को एक सार्थक चुनौती दे सकेंगी।**"33**

मृणाल पांडे कहते है कि- **"**इस तरह की अस्वस्थ परम्पराएँ तभी हटेगी जब पुराने न्यस्त स्वार्थी गुटों की जगह महिलाओं तथा सभी पिछड़े वर्गों को उनकी तादाद और महत्व के अनुपात में प्रतिनिधित्व मिलेगा। महिलाओं की भागीदारी बढ़ने से दकियानूस परम्परा, पोषण, महिला विरोधी हिंसा और भ्रष्टाचार में भी ऐसी गिरावट आयेगी, जिससे प्रशासन भी संभवतः स्त्रियों की दिक़्क़तों के प्रति अधिक संवेदनशील बन जाये।**"34**

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दो दशकों में नारी स्वतंत्र रुप से अपने मत का प्रयोग अच्छे ईमानदार नेता का चयन करने लगी है। **"**मन्नू

भंडारी ने अपने उपन्यास 'महाभोज' में बताया है कि राजनीति के कटु किन्तु निष्पक्ष और निष्कपट चित्र प्रस्तुत किया है।"**35**

(3.2.3) सामाजिक क्षेत्र में नारी

समाज में रहनेवाला मानव एक प्राणी है। मानव का अस्तित्व समाज के बिना संभव ही नही है। सर्वांगीण विकास के लिए मनुष्य को समाज में रहना जरूरी होता है। समाज सह अस्तित्व की विकास समान प्रक्रिया है, जिसमे मनुप्रय आपसी संबंधों के कारण अपने आत्मविस्तार सुरक्षा एवं संरक्षण के लिए आपस में बंधे रहते है। डॉ.शशिभूषण सिंहल ने कहाँ कि- "समाज सौददेश्य व्यक्तियों का गतिशील गठन है। समाज अपने सदस्यों को ब्राह्य घातक तत्वों द्वारा नष्ट होने से बचाता है रक्षा कर उनके व्यक्तित्व का विकास करता है और कुछ जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा कर उन्हें पाने के लिए प्रत्यनशील होता है।"**36**

मैकाइवर एवं चालॅस एवं पेज के मत अनुसार "समाज कार्य प्रणालियों और चलनों की अधिकार सत्ता और पारस्पारिक सहायता की अनेक स्वतंत्रताओं की एक व्यवस्था है। इस निरंतर परिवर्तनशील व जटिल व्यवस्था को हम समाज करते है।"**37**

अलग-अलग समाज की परिभाषा का अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि समाज मनुष्य का ऐसा समूह है जिसमे मनुष्य आपसी संबंधों से जुडे रहते हैं। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य के अनुभवों, व्यवहारों एवं प्रतिक्रियाओं पर सामाजिक परिस्थितियों का सीधा प्रभाव पडता है और इसी प्रभाव के कारण उसकी वैचारिकी तदनुरूप ही जाती है।

देश विभाजन साम्प्रदायिकता जातीय दंगे, नारी शोषण, भ्रष्टाचार आदि से सामाजिक मूल्यों का हास्य होने लगा। सामाजिक स्थिति सुधारने के लिए पंच योजनाएं क्रियान्वित की गई। नारी की स्थिति में

सुधार लाने के लिए विवाह कानून 1954, हिन्दू विवाह और विवाह विच्छेद कानून 1955, दहेज़ निषेध कानून 1961 पास किये गया थे। भारतीय समाज में संयुक्त परिवार की महत्ता धीरे-धीरे विखण्डित होती जा रही है। नागरीकरण, औधोगीकरण, शिक्षा के प्रचार-प्रसार, स्त्री की आत्मनिर्भरता,स्वतंत्रता, समानता एवं स्वाभिमान के कारण आज का आदमी व्यक्तिवादी हो गया है।

समाज में जो नारियों सदियों से शोषित, कुण्ठित एवं चारदीवारी के अन्दर क़ैद थी उन्हें स्वतंत्रता मिली तथा वे शोषण के प्रति विद्वोह अपनी स्वतंत्रता एवं समानता के लिए संघर्ष करने होगी। ये शिक्षा नियम-कानून एवं हक के प्रति सजग होने लगी। उनमें नवीन चेतना, नवीन भावना का संचार हुआ। आज वे परंपरागत रुढियों से मुक्त होकर स्वाभिमान से पुरुष के साथ हर कदम पर साथ चलने का प्रयास कर रही है। आज की नारियाँ, डॉक्टर, इंजीनियर, भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा एवं भारतीय विदेश सेवा में उच्च पदासीन होकर धर,परिवार एवं देश का नाम रोशन कर रही है। आजकल विवाह स्त्री पुरुष की आवश्यकता की पूर्ति मात्र रह गया है। प्रेम संबंधों में अनिश्चिचता एवं जटिलता की स्थिति मुखरित हुई है। नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व के कारण वैवाहिक विच्छेद, तनाव, अकेलापन, कुण्ठा की स्थिति पैदा हो रही है। नारी परिवर्तन के साथ पुरुष की भी सोच बदल रही है। **“**पुराने मूल्यों का विघटन प्रारम्भ हुआ और व्यक्ति चेतना का अधिकाधिक विकास होता गया।**”38**

शिक्षा भारतीय नारियों के प्रति जागरूकता लाई है। वे अपने व्यक्तित्व को सजाने-सँवारने तथा अपने आपको आत्मनिर्भर बनाने के लिए वे अधिकाधिक शिक्षित हो रही है। महात्मा गांधी ने स्त्री शिक्षा के संदर्भ में कहा है- **“**जिस माँ की छत्र-छाया में जीवन निर्माण की शिक्षा

मिलती है उसे अज्ञानता के अंधेरे में रखना अन्याय है।**"39** सच तो यह है कि स्त्री पुरुष एक गाड़ी के दो पहिए है। किसी एक के बिना समाज अधूरा ही समझा जायेगा। दोनों मिलकर परिवार, समाज, देश के विकास में भूमिका निभा सकते है।

(3.2.4) सांस्कृतिक क्षेत्र में नारी

संस्कृति शब्द संस्कृत भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है- 'उत्तम कृति' यानी धर्मानुसार मानवता के लिए आचार-विचार करना ही संस्कृति है। भारतीय संस्कृति में स्त्री-पुरुष की लिए विवाह करना एक अनिवार्य घटना है। यहाँ विवाह के संबंध को अति पवित्र माना जाता है। उसमें अत्यंत आदर की दृष्टि से देखा जाता है। परंतु इस विवाह व्यवस्था में पुरुष की स्थिति सर्वोपरि मानी गयी है और विवाहित स्त्री पति के अधीन मानी जाती है। यह अधीनस्थता की स्थिति ही स्त्री को शोषण का शिकार बनती है। आज भारतीय नारी विवाह के शोषणयुक्त स्वरूप को चुनौती दे रही है।

बाबू गुलाब राम के अनुसार **"**संस्कृति शब्द का संबंध संस्कार से हैं, जिसका अर्थ है संशोधन करना उत्तम बनाना।**"40**

हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है कि- **"**मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति है।**"41**

गोविन्द चातक के अनुसार- **"**संस्कृति केवल अतीत की विरासत नही वह मानव और समाज का रुपांतरण करने वाली पर्यावरण और मानव व्यवहार के बीच प्रवाहित और संबंधित होने वाली अंतर्धारा भी है।**"42**

संस्कृति के संदर्भ में पाश्चात्य विचारक लिखते है- **"**संस्कृति उन भौतिक तथा बौद्धिक साधनों या उपकरणों का सम्पूर्ण योग है। जिनके द्वारा मनुष्य अपनी जैवीय तथा सामाजिक आवश्यकताओं की संतुष्टि करता है तथा अपने आपको अपने पर्यावरण के अनुकूल बनाता है।**"43**

यह सभी परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि संस्कृति मानव की मूल प्रवृतियों का योग है, जिसमे मानवतावाद, सहिष्णुता, सदाचार, प्रेम एवं बंधुत्व समाहित होते है। भास्तीय संस्कृति का मूल आधार सत्य शिवं सुन्दरम् है किन्तु पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण के कारण भारतीय संस्कृति को गहरा धक्का लगा है। त्याग के स्थान पर भोग एवं मानवीय मूल्यों के स्थान पर असत्य, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचार की महत्ता बढ़ गई है।

अंग्रेजों के आगमन से पूर्व भारतीय,संस्कृति में अंधविश्वास, परंपरागत रुढियों, धार्मिक आडंबर, जातिवाद आदि विद्यमान थी। भारतीय संस्कृति की पहचान परंपरा, रीति-रिवाज, जातिवाद, वेषभूषा, रहन-सहन, संयुक्त परिवार, तीज-त्यौहार एवं नारी की सामाजिक स्थिति आदि से जुड़ी थी।

आज़ादी के बाद गांधी जी के रामराज्य, सत्य, अहिंसा के स्थान पर रावणराज्य, असत्य, हिंसा की महत्ता बढ़ गई। आस्था, सदाचार, जीवन मूल्य तथा नैतिकता के मानदण्ड पूर्णत: खण्डित हो गये। औधोगीकरण, एवं यंन्त्रिकरण ने ग्रामीण संस्कृति एवं सभ्यता की पूर्णत: विनष्ट करने का प्रयास किया, जिसके कारण नगरीय संस्कृति प्रादुर्भाव हुआ है।

नारी में शिक्षा के प्रति जागरूकता युगिन परिवेश के प्रभाव के कारण ही आई है। वह पुरुष सत्तात्मक सजाज की गली-सभी रुढि

परंपराओं से मुक्त हुई। अपनी स्वतंत्रता एवं समानता के लिए उसने आत्मविश्वास के साथ संघर्ष किया।

(3.2.5) धार्मिक क्षेत्र में नारी

धर्म शब्द 'धृ' धातु से बना है, धारण करना है ऐसा अर्थ जिसका होता है। धर्म उन शाश्वत नियम व सिद्धांतों का समूह है जिससे समान की रक्षा एवं सुख शान्ति में वृद्धि होती है।

मनुष्य जीवन के लिए धर्म इहलोक एवं परलोक की सफलता का साधन है। नीलप्रभा वर्मा ने लिखा है कि - **"**धर्म वह तत्व है जो मानव जीवन को पशुत्व से पृथक कर मानवत्व की क्षेणी में लाता है। धर्म देश व काल के पक्ष पर महापुरुषों द्वारा निर्दिष्ट जीवन की विशिष्ट प्रक्रिया है जो लौकिक एवं पारलौकिक सफलताओं का साधन है।**"44** ऋग्वेद में कहा गया कि - यज्ञेन यज्ञमयजन्न देवास्तानि धर्माणि प्रश्मान्यासन् अर्थात् यज्ञ के द्वारा पुरुष की देवताओं ने पूजा की थी।

मैकसर वैबर ने कहा है कि - **"**धार्मिक विश्वास सामाजिक स्तरीकरण से गहरे रुप से जुड़े रहते है।**"45**

वर्तमान संदर्भ में अखिलेश मिश्र ने धर्म को इस प्रकार परिभाषित किया है कि - **"**ले देकर धर्म की एक मोटी परिभाषा यह रह गई है कि ऐसे रहो, ऐसो चलो, ऐसी करनी करो कि न अपना सिर झुके न अपनो का सिर झुके।**"46**

आधुनिक सामाजिक व्यवस्था में धार्मिक प्रवृत्ति में बदलाव आ रहा है। मध्ययुग में जो आडम्बर सम्पूर्ण समाज में व्याप्त था उसका आधुनिक युग में विरोध प्रारम्भ हुआ। धर्म के नाम पर देश का विभाजन हुआ जिसकी परिणति आज भी सम्पूर्ण देश में दिखाई देती है। आर्य

समाज एवं रामकृष्ण मिशन ने धर्म परिवर्तन रोकने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किये जिसके लिए आर्य समाज ने शुद्धि आन्दोलन चलाया।

हिन्दू धर्म में ऊँच-नीच, अस्पृश्यता, मुस्लिम धर्म में जहाद का नारा, पहूदी धर्म में आकाश दीप की परिकल्पना आदि धार्मिक रुढिवादिता के उदाहरण है जिनसे प्रेरित होकर धर्मावलंबी अपने-अपने धर्म को श्रेष्ठ सिद्ध करने में लगे हुए है।

(3.2.6) शिक्षा क्षेत्र में नारी

स्त्री शिक्षा का प्रसार भारत के समाज में जल्दी से आगे बढ़ रहा है। साथ ही साथ अंग्रेजी माध्यम ज्यादातर बढ़ता जा रहा है। अधिकतर भारतीय शिक्षा विरोधी विचारों को छोड़कर नवीन शिक्षा की ओर बढ़ गया है। भारतीय परम्पराओं के प्रति लगाव रहा है। शिक्षा का वास्तविक अर्थ मनुष्य के संतुलित विकास में निहित है। जिससे मनुष्य की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक शक्तियों का विकास होता है, उसे शिक्षा कहते है। अत: जिस शिक्षा से स्त्रियाँ अपने मन, आत्मा व शरीर का विकास कर मानव कल्याण के लिए सन्नद्व हो उसी का नाम स्त्री शिक्षा है।

राष्ट्रीय जगृति ने स्त्रियों को घर की संकुचित क्षेत्र से निकाला, जिससे स्त्री शिक्षा का विपुल प्रचार हुआ। शिक्षित स्त्रियाँ में एक नवीन चेतना का अभ्युदय हुआ। उन्होंने जब नवीन दृष्टिकोण को लेकर जीवन मे प्रवेश किया तो डॉक्टर, अधिवकता, शिक्षिका तथा राजनीति जैसे क्षेत्रों, में प्रतिष्ठित होने लगी। भारतीय नारी की जागृति और अधिक व्यापक ही गई है।

नारी जाति ने अपने अधिकारों को स्त्री शिक्षा की प्रगति को पहचाना है। नारी आर्थिक रूप से स्वतंत्र और स्वालंबी बनने लगी। इस

प्रकार नारी दासी नही अपितु सहयोगिनी बन गई। पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित व्यक्ति नारी को पाश्चात्य सभ्यता में देखना चाहता था, तो भारतीय संस्कृति का अनुयायी व्यक्ति पाश्यात्य सभ्यता का प्रबल विरोधी था। नारी अब शिक्षा के क्षेत्र में पुरुष की समानता करने लगी। नवीन शिक्षा का प्रभाव भारतीय नारी पर दो रुपों में पड़ा है। बहुत नारी तो पाश्चात्य शिक्षा से पूर्ण होकर शिक्षित बनकर भी भारतीयता को तिलांजलि नही दी, बल्कि भारतीय ही बनी रही तथा निष्ठा प्रेम का परिचय दिया है।जो नारी पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित होकर भारतीय आदर्शों से दूर चली जाती है। नारी को समाज में भी पति के समान अधिकार है तथा पुरुष उसका शोषण नहीं कर सकता।

शिक्षा ने नारी को भारतीय आदर्शों की संतोषिका बनाया, वहाँ पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से वह अधिक साहसी और आत्मविश्वासी बनी। शिक्षा की इस नवीन प्रगति ने समस्त नारी जाति को अपने अधिकारों के प्रति जागरुक बनाया। नारी सोचने लगी की यह पुरुषों के समान है, इसलिए समाज में उसे भी अधिकार प्राप्त होने चाहिए। नारी पुरुष की सहयोगिनी है, अधाँगिनी है, दासी नहीं है। उसका क्षेत्र घर है तो पुरुष का बाहर है। दोनों का अपने-अपने क्षेत्र में पूरा-पूरा आधिपत्य है। जब नारी को सार्वजनिक क्षेत्र में कार्य करना पड़ता है, तो उसको अपने कार्य में पुरुषो के समान ही सफलता की प्राप्ति हो सकती है।

भारत में शिक्षित नारी ने गाँव में परिवार नियोजन, साक्षरता, स्वस्थय संबंधी सेवा देना प्रारंभ किया है। शिक्षित नारी ग्रामीण क्षेत्र में पशुपालन, पंचायत का कार्य, अच्छे कार्यो के लिए सम्मानित भी हो रही है। **"**आज की उच्च शिक्षा कुछ अपवाद छोड़कर या तो फैशन का अंग है या सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रश्न या फिर विवाह के लिए वर जुटाने का साधन ही है।**"47**

हमारे देश भारत में आज भी कहीं लड़कियाँ हैं, जो स्कूल नही जा पाती घरेलू कारणों से उनकी शिक्षा बीच में ही छूट जाती है। हमारे देश में ऐसी संख्या बहोत कम है की लड़कियाँ उच्च शिक्षा तक पहोंच पाई हो। इसलिए विवाह के लिए उच्च शिक्षित वर चाहिए तथा उच्च शिक्षित रोज़गार परक लड़के सरलता से नही मिलते है। दहेज़ के बाजार में उच्च शिक्षित लड़की की कोई कीमत नहीं है, अपितु लड़कियों की नौकरी भी एक नये किस्म का दहेज़ बन गई है।

अतः इस तरह शिक्षा क्षेत्र में भ्रष्टाचार और उसके बाद नौकरी हासिल करने में भ्रष्टाचार व्याप्त है। शिक्षा लेने के बाद आप सिफारिश नही करवा सकते तो डिग्री का कोई महत्व नही है। शिक्षा सुधार शिक्षा पाने के बाद नौकरी पर सरकार ध्यान नही देगी तो भारत में आने वाले समय में बहुत बड़ी दिक्कतें आ सकती।

(3.2.7) कार्य क्षेत्र में नारी

वर्तमान भारत के समाज में नारी घर के सिवाए अन्य बहार के कार्य क्षेत्र में जा रही है। वही पाश्चातय सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित होने के कारण अपने सर के साथ बात भी करती है, प्रेम भी प्रकट होता है। कार्य क्षेत्र में संलग्न होकर पर्दाप्रथा को पूर्ण तिलांजलि दे दी है, जो पारिवारिक सदस्यों के प्रतिकूल है। नारी पतिव्रत और धर्माचरण के कारण पुरुष से पीछे रह जाती है, ऐसा उनका विचार है।

नारी जब कार्य क्षेत्र में जाती है तो उसके सामने सम्बन्ध, अवैघ प्रेम, यौन अतृप्ति, पारिवारिक सामंजस्य, पति-पत्नी सम्बन्ध निर्वाह और बच्चों के पोषण आदि समस्याएँ आती है। कार्य क्षेत्र में कर्मरत नारी को पुरानी पीढ़ी के विचारों का विरोध करता पड़ता है। “नारी जब कर्म क्षेत्र में अवतरित होती है, तो उसके जीवन में अनेक सामाजिक समस्याएँ उत्पन्न

हो जाती है। उसका कार्य क्षेत्र घर और बाहर होने के कारण व्यापक हो गया है। पुरुष स्वच्छन्दता से प्रेमलाप करता है, किन्तु नारी के यौन संम्बधी नैतिकता के नवीन आयाम प्रस्तुत करता है।**"48**

आज के समय में नारी रुढियों और परम्पराओं का परित्याग करते गतिशील हो रही है। स्वतंत्र भारत में युद्ध, विभाजन, औधोगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा आदि से आर्थिक ढाँचा बदला है। नौकरी से धनार्जन करती है। फिर भी पारिवारिक सदस्यों द्वारा लाछित की जाती है। नारी को कार्य क्षेत्र में मानसिक और शारीरिक यातनाएँ भी सहन करनी पड़ती है। शिक्षित नारी सम्मानजक कार्य क्षेत्र में काम करते हुए परिवार को आर्थिक प्रदान करती है फिर भी पुरुष उसे शंकालु दृष्टि से देखता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है। गाँव में रहने वाले निवास करते है। यह जनसंख्या कृषि, कुटीर, उद्योग, हथकरघा जैसे कार्यो पर निर्भर करती है। देश के आर्थिक विकास में कृषि का महत्वपूर्ण योगदान है। कृषि कार्य ग्रामीण का मुख्य व्यवसाय है। कृषि क्षेत्र में नारी श्रमिको द्वारा किये जाने वाले अनेक कार्य बुनाई, निराई-गुडाई, चारे की कटाई, अनाज निकलवाने काम करती है। इसके अलावा मुर्गीपालन, पशु पालन और मधुमखी के पालन का कार्य भी करती है। ग्रामीण विकास में नारी पढी-लिखी नही होती, फिर भी वह अपने घर में आर्थिक मदद भी करती है।

मध्यवर्ग के समाज में कामकाजी स्त्रियों की बड़ी भूमिका है। नारी की भूमिका का निर्वाह कर रही है तो रोल मॉडल भी बनी है। पुरुष का विमर्श सबसे अधिक स्त्रियाँ की स्वांयतता और स्वतंत्रता से घबराता है। इस समाज में ऐसा एक भी पुरुष नही है जो बदसूरत लड़की से विवाह करने को तैयार हो जाऐ। इसके विपरीत जब औरतें स्वयं निर्णय लेकर

सौदर्य धारण करती है, अच्छे वस्त्र पहनती है, तो वे भारत की महान नारियाँ बन जाती है। पुरुष ही औरतों के सिर पर अश्लीलता का ठीकरा फोड़ते है।

नारी जब काम करने बाहर जाती है तो इसमें क्या अपराध है। नारी को प्रायः इस तरह शिक्षा भी दी जाती है। जिसका व्यक्तित्व अच्छा होता है, वह कुछ कर सकता है। 'आपका बंटी' की शकुन अजय के अहं से त्रस्त होकर उससे विवाह विच्छेद तो कर लेती है। परन्तु अजय को नीचा दिखाने के लिए डॉ.जोशी के साथ विवाह सूत्र में बंधती है, तथा उसे कदम-कदम पर जोशी से समझौता करना पड़ता है।

(3.2.8) परिवार के क्षेत्र में नारी

एक से ज्यादा लोग साथ में रहते है उसे परिवार माना जाता है। परिवार के द्वारा व्यक्ति को सुरक्षा, शिक्षा, संस्कार, प्रेम, श्रद्धा, निष्ठा, प्राप्त होते है। इसी से परिवार सुसंस्कृत बनता है। वर्तमान भारतीय समाज में संयुक्त परिवार विघटित हो रहा है। व्यक्तिवादी परिवारों का निरंतर निर्माण हो रहा है।

हम नारी के परिवार के बारे में बात करे तो जब उसका जन्म होता है तो उसका माता-पिता का घर एक परिवार होता है। शादी के बाद ससुराल के सभी लोगों का परिवार बन जाता है। जब नारी के बच्चों की शादी हो जाती है तो उसके साथ रहकर उसका परिवार बन जाता है। नारी का जन्म से मृत्यु तक बहोत सारे परिवार बन जाते है। जो लागणी के साथ जुड़ जाता है।

आज-कल समाज में एक हवा चल रही है कि संयुक्त परिवार की जगह विभक्त परिवार ज्यादा दिखने को मिलता है। जिसमें पति-पत्नी और उनके बच्चों ही साथ रहते है। विभक्त परिवार का कारण नौकरी पेशे

की वृद्धि, औधोगीकरण, यातायत की सुविधा, पाश्चात्य शिक्षा का भी असर है। वैयक्तिक स्वार्थो के कारण नारी का पारिवारिक स्नेह सूत्र टूट रहा है। नारी वैचारिक मतभेद के कारण तनाव ग्रस्त रहने लगी है।

जिसके नीचे परिवार का पालन-पोषण रहता है, उसके हाथों में ही स्वामित्व होता है। नारी ने घर बाहर दोनों जगह कार्य करना शुरू कर दिया है। नारी के समक्ष सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक समस्याओं के प्रति जागृत हुई है। आजकल नारी पुरुष के प्रति विद्रोह भी करने लगी है। चाहे वो शिक्षित-अशिक्षित हो दोनों तरह की नारियाँ विरोध प्रकट करती है।

पारिवारिक दायित्व मुक्ति नारी में कदापि नहीं है। नारी अपने पारिवारिक सूत्र को जोड़कर रखने के लिए स्त्री पुरुष का शोषण सहन करती है। ऐसी स्थिति में स्त्री पति और परिवार को त्यागकर अलग पहचान बनाने के लिए बाह्य होती है। नारी आर्थिक रुप से स्वतंत्र हो या गृहिणी हो उसे शारीरिक और मानसिक सहयोग मिलना चाहिए। अत: परिवार विघटन में में नारी और पुरुष दोनों उत्तरदायी है। मृणाल पाण्डे के अनुसार **"**दुनिया में स्त्री और पुरुष के बीच संतुलन बिगड़ा हुआ है। स्त्री का पलड़ा तमाम ज़िम्मेदारियों के बोझ में नीचे झुका दिया गया है, जबकि पुरुष का पलड़ा सत्ता की ताकत से उपर रखा गया है।**"49**

भारत के समाज में नारी के साथ घरेलू हिंसा भी होती है, जिसके अंतर्गत शारीरिक हिंसा, गाली-गलौच, मानसिक कलेश देना, यौनहिंसा आदि है। इस सभी की नारी कोई शिकायत भी नही कर सकते। यदि कुछ नारियाँ शिकायत करती तो उसे घरेलू मामला कहकर रफ़ा-दफा कर दिया जाता है। अविवाहित लड़कियाँ गर्भधारण की परिस्थिति में आत्महत्या कर लेती थी,क्योंकि परिवार उन्हें स्वीकार नही करता था।

कथा साहित्य में वर्तमान भारतीय समाज में पारिवारिक विघटन का व्यापक चित्रण किया है। महानगरों में पाश्चात्य रहन-सहन, खान-पान आदि से एकल परिवार प्रभावित हो रहे है। सामान्य परिवारों के नर-नारी आकर्षण के शिकार है तथा सुख-सुविधाओं के पश्चात् भी घुटन अकेलेपन जीवन जीने के लिए विवश है। हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में पारिवारिक जीवन पर आधारित उपन्यास नगण्य है। भारतीय परिवार में संयुक्त जीवन क्यों विघटित हुआ इस विषय पर प्रेमचन्द के रंगभूमि, निर्मला, गोदान, गबन आदि उल्लेखनीय है। पारिवारिक जीवन का प्रमुख स्तम्भ तो दाम्पत्य जीवन है।

डॉ.महेन्द्र भटनागर के शब्दों के अनुसार **"**पुरुष प्रधान समाज में नारी के स्वाभिमान का कोई मूल्य नही समझा जाता। अत: स्त्री का जीवन का बड़ा दयनीय हो जाता है। उसके दाम्पत्य जीवन की कल्पना चूर चूर हो जाती है। पुरुष प्रधान समाज का आधार आर्थिक है।**"50**

अतः हम इस तरह कह सकते की सामाजिक परिवर्तन के साथ परिवार में भी परिवर्तन होता गए हैं। पारिवारिक संगठन में यह अनिवार्य है कि परिवार में रहने वाले लोगों के उद्देश्यों की व्यक्तिगत आकाक्षाओं और अभिरुचियों में एकता होनी चाहिए। पारिवारिक एकता बनाये रखने में नारी की भूमिका ज्यादा मानी जाती है।

(3.2.9) विवाह संस्था के क्षेत्र में नारी

विवाह संबंध से मनुष्य सामाजिकता की प्राप्त होता है। विवाह केवल दो आत्माओं को ही एक नहीं करता दो समाजो को और दो परिवारों को एक करता है। सामाजिक संगठन में विवाह का महत्वपूर्ण स्थान है। सुरीले जीवन को पाने के लिए विवाह आवश्यक है। आज विवाह के अनेक सोपान है। इन सोपानों के पार करने पर लड़के और

लड़की का विवाह होता है। वैवाहिक प्रेमचंद के अनुसार- "विवाह स्त्री-पुरुष के अस्तित्व को संयुक्त कर देता है। उनकी आत्माएं एक दूसरे में समाविष्ट हो जाती है।"**51** वर्तमान समाज में विवाह का आदर्श लुप्त हो गया है, दाम्पत्य जीवन में सुख दुर्लभ हो गया है। विवाह में जो विसंगतियों आ रही है, उससे दाम्पत्य सुख विकृत हो गया है। नारी के सामाजिक रूप लुप्त हो गये है।

हम सभी जानते है, की भारतीय समाज में दहेज़ प्रथा, बाल-विवाह, अनमेल विवाह जैसी कुप्रथाएँ आ गई है, जिससे विवाह जीवन मुश्किल बन गया है। आर्थिक अभाव में माता-पिता दहेज़ के कारण अयोग्य वरों के साथ कन्या का विवाह कर देते है तथा पति की मृत्यु के प्रश्चात् उसे निराश होकर अनैतिकता की शरण लेनी पड़ती है। वर्तमान भारत में प्रेम विवाह का व्यापक प्रचलन हुआ है, जो कुछ समय में ही तलाक तक पहुँच जाता है। आज की नारी प्रेम किसी और से करती है तथा विवाह किसी और से होता है। हमारे समाज में विवाह पूर्व प्रेम को समाज स्वीकृति नही देता है, किन्तु यह परम्परा उत्तरोतर विकसित हो रही है। नारी पति के होते हुए भी प्रेमी से मिलने के लिए स्वतंत्र है। आज के विवाह में लड़की का निर्णय प्रमुख हो गया है, तथा माता-पिता का निर्णय गौण हो गया है। नारी के जीवन में काम भावना का प्राधान्य हो गया है, इसलिए यौन पवित्रता का कम होता जा रहा है।

हमारे भारतीय समाज में विवाह एक संस्कार है। पहले विवाह में जितनी विविधता थी, 20 वी शताब्दी के उतरार्द्ध में वह समाप्त हो गई है। वैवाहिक संबंध माता-पिता की अनुमति से होने के कारण नारी स्वेच्छा से वर चुनने के अधिकार से वंचित रही। विवाह संस्कार में धन धान्य से युक्त कन्या को वर के हाथ दान न दिया जाता है। उसका अस्तित्व समाप्त हुआ और दहेज़ प्रथा को प्रोत्साहन मिला। आर्थिक विषमता की

स्थिति में उसे अनमेल विवाह के लिए भी विवश होना पड़ा। इन समस्त अभिशापित अत्याचारों को नारी मौन भाव से स्वीकार करती आ रही है। दहेज़ प्रथा के कारण नारी को अनमेल विवाह, बाल - विवाह, बहु विवाह, वृद्ध विवाह, प्रेम विवाह आदि के रूप में स्वीकार करना पड़ा है। इससे समाज में वैवाहिक विकृतियाँ आती गई और सामाजिक संगठन जर्जर होता गया। इस तरह से विवाह की परिणति अंततः दुखद ही होती है। इस तरह नारी अन्दर ही अन्दर घुटती रही है।

पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से नारी में बदलाव आया है और उसकी मानसिकता में पति ऐसा होना चाहिए जो पत्नी को अथाह प्रेम करे तथा उसे ही अन्नपुर्णा माने। भारत में नारी के वैवाहिक विज्ञापनों को देखकर समझा जा सकता है कि उनकी परंपरागत छवि सुदृढ़ हो रही है। अब दहेज़ की बात न कहकर डीसेट मैरिज पर जोर रहता है। **"**पुरुषों के लिए विज्ञापनों में जिस बात पर विशेष जोर रहता है वे है - फ़ाइव फिगर सेलरी और द ओनली सन कुल मिलाकर वेतन की बात कहना या इकलौता पुत्र होने की बात बताना उसकी सामाजिक हैसियत, संपत्ति और प्रकारांतर से उसकी कार्यशक्ति की बात करना है। यही नही, वैवाहिक विज्ञापनों में जिस तरह जाति की बात की जाती है, कुंडली माँगी जाती है, स्त्री की नौकरी को भी दहेज़ का एक हिस्सा मान लिया गया है। वह स्त्री की बदली हुई स्थिति से आँख मूंद लेने का ही परिणाम है।**"52**

वर्तमान समाज के समय में स्त्री भली-भाँति समझ गई है कि विवाह एवं परिवार जैसी संस्थाओं के बिना भी उसका अपना एक अस्तित्व है। धर्म, विवाह, प्रेम एवं संबंधों के प्रति भी उसका दृष्टिकोण बदला है। आज विवाह उसकी दृष्टि में अनिवार्य नही है, वह यौन संबंधों को पाय नही अपितु स्वाभाविक संबंध मानती है। यौन शुचिता जैसे प्रश्न आज के युग में अप्रासंगिक हो गये है।

मन्नू भंडारी जीवन में पुरुष की अनिवार्यता को स्वीकार करती है - **"**नारी सब कुछ होकर भी नारी है और नारी को एक साथी चाहिए, एक सहारा चाहिए, परिवार चाहिए और चाहिए बच्चे।**"53**

(3.2.10) वैयक्तिक क्षेत्र में नारी

वर्तमान भारतीय समाज में नारी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में विपुल परिवर्तन आया है। भारत सरकार और संविधान ने नारी के विकास के लिए जो योजनाएँ बनाई, उनके प्रति नारी जागरुक हुई, देश में अनेक स्त्रीवादी संगठन बने जिनसे नारी शिक्षा का प्रसार हुआ तथा हर क्षेत्र में नारी की सहभागिता स्थापित हुई। आज शिक्षित नारियाँ उच्च पदों पर आसीन है - **"**इंदिरा गांधी, मायवती, हिलेरी किलंटन, भुट्टो-औरत क्या नही हो सकती ? वह फूलन देवी हो सकती है और उषा पीटी भी।**"54** नारी भी एक ऐसी संपूर्ण मानवीय है, जो पुरुष से शारीरिक भिन्नता लिए ऐसी असीम संभावनाओं का वैसा ही पूँजी भूत रूप है जो अपनी आन्तरिकता वैयक्तिकता और स्वतंत्रता द्वारा जीवन के उच्चतम सोपानो का स्पर्श कर सकती है।

वर्तमान भारतीय समाज में नारी ने अपनी स्थिति निर्मित करने के लिए संवैधानिक अधिकारों में पहचान है, शिक्षित होने का प्रयास किया है आर्थिक रुप से आत्मनिर्भर हो रही है। आजकल नारी **"**दिल्ली में रैली निकाल सकती है तथा उप राज्यपाल के कार्यालय के समक्ष धरना दे सकती है।**"55** नारी ने वैयक्तिक स्थिति के लिए आर्थिक स्वावलंबन को चुनौती दी है। अब वह सुरक्षा कार्य और अंतरिक्ष को छूने की ललक के साथ वकील, पुलिस, डॉक्टर, खिलाड़ी आदि बनकर देश को गौरव कर रहा है।

नारी ने अपनी स्थिति की रक्षा के लिए अनेक संगठन बनाये है। उन्होंने मुंबई में महँगाई प्रतिकार संयुक्त महिला समिति में वस्तुओं के मूल्य कम करने को, सेवा समिति में स्त्री को रोज़गार देने के लिए संगठन बनाकर कार्य किया है। इसके साथ दहेज़ के विरुद्ध और सती विरोध के अभियान भी चलते रहे है। आज नारी में शौषण और अत्याचार के प्रति चेतना जागृत हो रही है। वैयक्तिक स्थिति के लिए तो नारी लडती है, किन्तु अपनी पहचान स्थापित करने में असमर्थ रहती है।

हमारे देश की समाज की नारी अपने अस्तित्व और अपनी अस्मिता के प्रति सजग है। आज नारी अस्मिता के प्रश्न को समाज, धर्म, राजनीति, संस्कृति आदि के संदर्भ में विश्लेषित करना आवश्यक है। नारियों ने देश को गौरवांवित किया है, वहाँ उसका दैहिक और मानसिक शोषण भी हो रहा है। यास्था चटर्जी के अनुसार **"**आज़ादी के बाद ही स्त्री जीवन के सुधार के लिए विवाह, सम्पति, मताधिकार, अवसरों एवं तनखाहो में बराबरी संम्बधी कानून बनाने की बात सोची गई।**"56** आज भी उसी नारी को आदर्श माना जाता है, जो पति को परमेश्वर मानती है, इससे नारी हिंसा के ग्राफ़ में निरंतर वृद्धि हो रही है।

वर्तमान समाज में महिला जागरण हुआ, नारी ने सुरक्षित स्थिति के लिए रोज़गार और आत्मनिर्भरता के लिए तथा आर्थिक सुरक्षा के कानून पास कराये। मृणाल पाण्डे ने कहा है कि - **"**मैं यह नही कहती कि पुरुष के बदले अब स्त्री का वर्चस्व स्थापित होना चाहिए। जरूरत तो इस बात की है कि स्त्री को स्वयं अपने बारे में सोचने-विचार ने एवं निर्णय का अधिकार मिले।**"57** नारी उस गुलामी से मुक्ति चाहती है, जिसने उसे भ्रम और झूठे सपने में जीवित रखा है।

मन्नू भंडारी ने लिखा है कि- "नारी सब कुछ होकर भी नारी है और नारी को एक साथी चाहिए।"**58** भारत के समाज में नारी अपना सम्पूर्ण एवं समुचित स्थान प्राप्त नही कर पाई है। आज की नारी सजग है, जागरुक है और अपने वैयक्तिक जीवन में बाधाओं का विरोध करती है।

3.3 भारतीय परिवेश में नारी

समाज में नारी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। उसे सुख और समृद्धि का प्रतिक माना जाता है, किन्तु मनुष्य ने स्वार्थ वश नारी को मात्र भोग विलास की वस्तु समझकर समाज में उसकी स्थिति दयनीय कर दी है। जिस नारी को भारतीय समाज में देवी की उपाधि से सम्मानित किया जाता है। नारी को शारीरिक व मानसिक रूप से कही न कही उसे हमेशा शोषित किया जाता है। जिसका मुख्य कारण भ्रष्टाचार, सहनशीलता व कुछ हद तक अपने अधिकारों के ज्ञान का अभाव है।

दया के सागर की अतुल गहराईयों को छूने वाला हृदय, ममता की साकार मूर्ति, नयनों में प्यार की परछाइयों से परिपूर्ण वह नारी है जिसने अनेक महापुरुषों को जन्म दिया। जन्म के साथ-साथ सुसंस्कारों से सुसज्जित किया है। देवी, माँ, सहचरि, प्राण भारतीय संस्कृति में स्त्री के अनेक रूप बताये है लेकिन भारतीय समाज ने क्या नारी के इन रुपों को ध्यान में रखकर उसकी शिक्षा-दिक्षा दी है। स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि - "स्त्रियों को सदैव असहायता और दूसरों पर निर्भरता की शिक्षा दी गई है।"**59** यह शिक्षा देकर ही पुरुषों युगों में नारी पर शासन करता आ रहा है और नारी को सदैव नाज़ुकता की सीमा के अन्दर ही रेखांकित किया गया है। नारी विवशता की जंजीर में जकड़ी हुई तभी से शिक्षित

होने का प्रयास कर रही है। भूतकाल से वर्तमान तक नजर डाले तो नारी का इतिहास अत्यंत ही गौरव पूर्ण रहा है।

(3.3.1) ग्रामीण परिवेश में नारी

देश के ग्रामीण जनसंख्या में लगभग आधा भाग नारियाँ का है, अतः ग्रामीण विकास में नारियाँ की अनदेखी नही की जा सकती है। किसी भी देश की सामाजिक, आर्थिक प्रगति को जानने के लिए वहाँ की नारियाँ की स्थिति एवं स्तर का आंकलन करना अति आवश्यक है। समाज में नारियाँ की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। नारियाँ की शक्ति का समुचित उपयोग करने एवं सम्माननीय स्थान देने पर वे राष्ट्र के विकास को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित कर सकती है। यह सच है कि ग्रामीण नारियाँ का विकास की मुख्य धारा से जोड़े बिना किसी समाज, राज्य एवं देश के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक विकास की कल्पना भी नही की जा सकती है।

स्वातंत्र्योतर काल में सम्पूर्ण ग्राम-चेतना का स्वरूप ही बदल गया है। गाँवों की समूची संवेदनात्मक अनुभूति, वैचारिक मानसिकता, सामाजिक सम्बन्ध, रहन -सहन, परिवर्तित हो गया है। गाँवों का शहरीकरण हो गया है। शहरी वेश-भूषा और फिल्म का बढ़ता प्रभाव उन पर स्पष्ट रूप से देखा जाता है।

ग्रामीण महिलाओं का जीवन अत्यधिक श्रमसाध्य है। सुबह सूर्योदय से पहले प्रारंभ हुई दिनचर्या में घर की साफ-सफाई करना, परिवार के लिए भोजन बनाना, बच्चों को तैयार कर उन्हें शाला में भेजना, जानवरों को चारा देना, दूघ दुहना, कपडे धुलना, उपले बनाना आदि के अतिरिक्त उन्हें खेतों पर जाकर रोपाई, निकाई, गुडाई, कटाई आदि कार्य करने के साथ भोजन के लिए लकडियों भी घर लानी होती है। देर रात तक काम

कर परिवार व समाज को भोजन उपलब्ध कराने वाली ग्रामीण नारियाँ की खाघ सुरक्षा सदैव खतरें में रहती है, क्योंकि सोते वक्त उसे भर पेट भोजन मिलेगा कि नही ? इस बात की कोई गारंटी नही होती। ग्रामीण नारियाँ द्वारा किये जाने वाले बहुआयामी कार्यो को निम्न तीन शीर्षकों में वर्गीकृत किया जा सकता है -

(1) घरेलू कार्य - भोजन बनाना, बच्चों का पालन-पोषण करना, पीने का पानी व ईधन इकट्ठा करना, घर का रख-रखाव व साफ-सफाई करना आदि।

(2) कृषि कार्य - बुवाई, रोपाई, निकाई, गुडाई, कटाई, मढाई व भण्डारण आदि।

(3) अन्य सम्बद्ध कार्य - पशु पालन, प्रबन्धन से सम्बन्धित सभी कार्य व मुर्गी पालन आदि सहायक कार्य।

ग्रामीण नारियाँ के जीवन स्तर में वर्तमान समय में धीमी गति से सुधार हो रहा है। जिसका मुख्य कारण ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का सीमित प्रभाव रहा है। इन कार्यक्रमों का लाभ दूर दशज के इलाकों तक नहीं पहुँच पाया है। इसलिए योजना के पारुप में स्पष्ट रूप से उल्लेखित किया गया है कि - **"**विभिन्न क्षेत्रों के विकास के लाभ से महिलाओं को वंचित नही रखा जाए और सामान्य विकास कार्यक्रमों के साथ-साथ महिलाओं के लिये विशेष कार्यक्रम भी चलाए जाए। सामान्य विकास कार्यक्रमों में आर्थिक जैंडर संवेदनशीलता परिलक्षित की जानी चाहिए।**"60**

(3.3.2) नगरीय परिवेश में नारी

औद्योगिक प्रगति की निरंतरता से हमारे समूचे देश का ही कायापलट हो गया है। जहाँ पहले कस्बों में भारत बसा था अब औद्योगिक विकास के कारण हर उधोग कस्बे में जा बसा है। जिससे वहाँ

की भौतिक सुख-सुविधाएँ बढने के साथ ही लोगों की रुचि, रहन-सहन, विचारों में भी परिवर्तन आया। तेजी से होते शहरीकरण के कारण गाँव का हर आदमी शहर, नगर से किसी न किसी तरह जुड़ा होता है। गाँवों का रुप पूर्णरुप से बदल गया है। जो अब तक गाँव थे वे तेजी से नगरीय सभ्यता सीख कर शहर बनने का उत्सुक है।

एक ग्रामीण व्यक्ति जो भोला-भाला है उसे यह परिवर्तन देखकर आश्चर्य होता है कि एक लड़की की वेशभूषा इतनी आधुनिक कैसे हो गयी जिससे यह समझ में नहीं आता कि वह लड़का है या लड़की। एक स्त्री की वेशभूषा ग्रामीण को संभ्रम में डाल सकती है। तो जिस शहर में वह रहती है वहाँ की स्थिति तो सारे समाज को ही दिग्भ्रमित कर सकती है। आज हम जिसे शहर कहते है उसके एक रुप का वर्णन कर रहे हैं, के.पी. सक्सेना अपने लखनवी ढंग से - **"**मेरे अपने शहर में सेक्स का अड्डा पकड़ा गया और वे सब चीजें बरामद हुई जो सेक्स के लिए ज़रुरी है, मसलन, सोडा, कबाब, गिलास, संबंधित साहित्य और कई मदद लड़कियाँ और बूढ़े। ख़बरें तस्वीरों समेत छपीं। सारे शहर का बदन गर्म हो उठा। पूरा शहर सुखी हो गया।**"61** शहर की रहने वाली आधुनिका भी अजब पोशाकें पहनती हैं, जिससे सारे लोगो का ध्यान उसकी तरफ आकृष्ट होता है।

नगर का रहन-सहन, अत्याधुनिकता, फैशन कुछ हद तक नारियाँ की आर्थिक मजबूरी इन सभी कारणों से शहर में नारी का सामाजिक परिवेश पूर्णरुप से बदल गया है। शहर में छेड़खानी की वारदाते भी बढ़ती हुई नजर आती है। नारी अपमान और छेड़खानी की घटनाएँ जिस तेजी से घट रही है, और जिस रुप में घट रही है, उससे भी स्थिति भी गंभीरता का अंदाजा लगाया जा सकता। बस की भीड़ में जानबूझकर धक्का देना, उन पर फिकरे कसना, साइकिल या स्कूटर पर जाती हुई युवतियों को

टक्कर मारकर गिरा देना जैसी घटनाएँ तो जैसे रोज़गारी की बात है। शारीरिक, मानसिक, सामाजिक उत्पीड़न देने वाली छेड़खानी की इन घटनाओं का नजर अंदाज़ नही किया जा सकता।

नगर के युवकों के बारे में यही कहना उचित होगा कि वे वहाँ की लड़कियों को छेड़खानी वगैरा छोटी-छोटी चीजों में क्षणिक सुख पहुँचाने की अपेक्षा यह ज्यादा उचित समझते है कि उन्हें ज़िन्दा जलाकर मोक्ष की प्राप्ति करवाई जाती है। छेड़खानी करने की अपेक्षा बर्बरता से किसी नारी को जला देना जैसी नृशंस घटना जैसी महानगर में विशेष बनती है। महानगरों में ऐसी स्थिति में छेड़खानियों के लिए नारियाँ को जिम्मेदार ही माना जाता है। कुल मिलाकर स्थिति यह हो जाती है कि छेड़खानी करने वाले नवयुवक के लिए मैदान छोड़ने के अतिरिक्त और कोई रास्ता भी नही बचता।

आज भी शहर, नगर, महानगरों में इसी से मिलता जुलता वातावरण है। चाहे वह युवतियों को कार्यवश बाहर जाना पड़े या बस से जाना पड़े, पुलिस - स्टेशन, विश्वविद्यालय, कॉलेज, होटल, सिनेमा गृह ऐसे सार्वजनिक स्थानों पर भी ये वारदाते निरंतर प्रगतिशील है। इन सारी स्थितियाँ को देखते हुए नारी के सामाजिक संगठन की आवश्यकता महसूस होती है। परसाई ने भी एक उदाहरण देकर समस्त पुरुष जाति के समक्ष एक प्रश्न उपस्थित किया है - **"**एक शहर में सड़क से निकल रहा था। कॉलेज का समय था। आज भी जगह-जगह लड़कियाँ छेडी जा रही थी। उन्हें धक्का देकर गिराया जा रहे थे, जैसे कुछ हुआ ही नही हो। मुझसे चुप रहते न बना और मैंने एक आदमी से पूछ लिया, नारी की इज़्ज़त लूटी जा रही है और तुम सैकडों लोग विरोध नहीं करते, उनकी रक्षा नही करते। तुम लोग क्या सब नपुंसक हो?**"62**

आज हर क्षेत्र में नारी आगे बढ़ रही है। खास तौर पर शहरी क्षेत्र की नारियाँ ने काफी तरक्की की है। उनमें ग़जब का आत्मविश्वास होता है। आज नारियाँ में प्रतिबद्धता और समर्पण पुरुषों के मुकाबले ज्यादा होता है। शायद इसलिये उनके बिना हमारा कोई काम पूरा नही होता।

इस तरह वास्तविकता यह है कि आज भी हम पुरानी रुढिवादिता में कही न कही घुसे है। हम नये समाज में रहने का दावा तो करते है किन्तु लड़कियों के लिए कही न कही उस पुरानी रुढियों को छोड़ना भी नही चाहते। यदि हमे समाज में आगे बढ़ना है तो गाँव हो या शहर की नारियाँ को पुरुष से कंधे से कंधे मिलाकर चलना होगा चाहे शिक्षा हो या फिर कुछ भी। उनके आत्मविश्वास को बढ़ाना है। आज की नारियाँ कठिनाईयों का सामना करते हुऐ कामयाबी की चोटी को छू रही है। क़स्बा हो, गाँव हो, शहर हो नगर हो या महानगर हो नारियों के लिए कोई ऐसा स्थान नही है जो पूर्णरुप सुरक्षित कहा जा सके कही कम तो कही ज्यादा मात्रा में इस प्रकार का वातावरण दिखाई देता है।

3.4 नारी की अवधारणा

नारी में भी मानवीय संवेदना का स्वरूप लहराता है। मानवीय सृष्टि में उसकी भी भूमिका पुरुष के समकक्ष है। लेकिन कामलिप्सा में पुरुष इतना अंधा हो गया है कि उसके लिए नारी शरीर सिर्फ शारीरिक पूर्ति का साधन है, इसलिए पुरुष उसे हर तरह से नियंत्रित करना चाहता है। इस संदर्भ में राजेन्द्र यादव आदमी की निगाह में औरत लेख में कहते हैं कि - **"**स्त्री स्वयं काम है, उसे ही जीतना नियंत्रित करना है, या फिर कुचलना है। पुरुष ने स्त्री के खून में यह भावना संस्कार की तरह कूट-कूटकर भर दी है कि यह सिर्फ और सिर्फ शरीर है।**"63** लेकिन उपरोक्त पंक्तियों में इतना तो साबित हो ही जाता है कि अधिकांश पुरुष के लिए

स्त्री का महत्व उसके शरीर से ज्यादा नही है। जबकि पुरुष के बारे में राजेन्द्र यादव ने कहा है कि - "पुरुष भी वृशभस्कन्ध बाहुबली वजवक्ष और वीर्पवान है। मगर सिर्फ उतना ही नही है, वह मन मस्तिष्क और मेघा भी है - बल्कि अधिकांश में वही है।"**64** लेकिन इस बात के आधार पर यह मान लेना की पुरुष के पास सारे गुण है और स्त्री काम मात्र का साधन है तो यह बात गलत है जैसा की गांधीजी कहते हैं कि - "जहाँ मूल रुप में स्त्री और पुरुष एक है, वहाँ यह भी उतना ही सच है कि शरीर रचना की दृष्टि से दोनों में गहरा अंतर है। इसलिए दोनों का काम भी जुदा-जुदा ही रहेगा।"**65** इसका अर्थ है कि जिस कार्य को करने में पुरुष सक्षम है उस कार्य को करने में स्त्री सक्षम नही। इस पितृसत्तात्मक समाज में सर्वत्र पुरुष ही पुरुष मालूम पड़ता है सारे उच्च कोटि के अधिकार और उपमाएं उसी को प्राप्त है।

भारत में संविधान के मुताबिक पुरुष और नारी को समान सामाजिक अधिकार प्राप्त हैं, लेकिन व्यवहारिक जीवन में नारी आज भी हीन मानी जाती है। पश्चिमी सभ्यता में भी नारी को देवी और शक्ति के रुप में माना गया है। लेकिन व्यवहारिक रुप में नारी को पैर की जूती ही माना जाता है। नारी को अपने मन से जीने का अधिकार नही है। वो सिर्फ वही कर सकती है जो समाज उसे अनुमति देता है। उसके खिलाफ जाकर परंपरा को तोड़ना पाप है पाप की सजा देने के लिए गाँव में पंचायत या कानून मौजूद है। हमारी भारतीय समाज में परंपरा रही है, कि नारियाँ पुरुषों की सेवा करे, घरेलू कामकाज करे एवं दाम्पत्य जीवन का निर्वाह करें और अपने अधिकार की मांग न करें। परिवार और समाज का पूरा ढाँचा इसी पर आधारित है। यही परंपरा ऊपर से नारी का आभूषण दिखती है पर असल में ये बंधन ही है। इन नियमों को पुरुष ने बनाया ही नही बल्कि उन्हें नारी के ऊपर कभी स्नेह, प्यार और

सहानुभूति से तो कभी छल कपट से लागू किया। इतना कुछ खोकर भी नारियाँ सम्मान के पात्र नही बन पाई। मृणाल पाण्डे ने लिखा है कि- "पुरुषतत्व कि मूल अवधारणा हमारे समाज में हमेशा सकारात्मक और केन्द्रीय रही है। यानि पुरुष का जन्मना एक संपूर्ण मानव ही नही, मानवता का सही और आदर्श स्वरूप होना सहज स्वीकृत रहा है। इसके ठीक विपरीत समाज में नारीत्व की मूल अवधारणा नकारात्मक है। लगभग सभी धार्मिक और दार्शनिक दोनों दायरों में नारी को पुरुष के संदर्भ में एक अपूर्ण और सापेक्ष जीवन के रुप में देखा गया है।"**66** पुरुष प्रधान समाज में नारी चाहे कुछ भी कर ले या किसी भी प्रकार की उपलब्धि हासिल करलें वह आखिर में नारी ही रहेगी जो समाज और धर की शोभा ज़रुर है मगर सम्मान की अधिकारी नही है। यदि है भी तो पुरुष के बाद और वो भी तब जब पुरुष चाहे। इसके बारे में गांधी जी ने कहाँ है कि- "अहिंसा की नींव पर रचे गये जीवन की योजना में जितना और जैसा अधिकार पुरुष को अपने भविष्य की रचना का है उतना और वैसा ही अधिकार नारी को भी अपना भविष्य तय करने का है। लेकिन अहिंसक समाज की व्यवस्था में जो अधिकार मिलते है वे किसी-न-किसी कर्तव्य या धर्म के पालन से प्राप्त होते है। इसलिए यह भी मानना चाहिए कि सामाजिक आचार व्यवहार के नियम नारी और पुरुष दोनों आपस में मिलकर और राज़ी खुशी से तय करे।"**67**

समय के साथ-साथ परिवेश के अनुरुप भी व्यक्ति का निर्माण होता है। लड़का या लड़की का जब जन्म होता है तो वह उस समय के परिवेश के अनुरुप ही अपना निर्माण करते है। परिवेश भी उसे वही सिखाता है जो उस समय के अनुरुप प्रचलित है। वैदिक युग के उपरांत भी युग आए उसमें व्यक्ति ने अपनी क्षमता के अनुरुप नियमों, कार्यो व विचार धाराओं में परिवर्तन किए। नारी को परिवेश के बारे में बार-बार उसे पुरुष

से कमजोर बताया गया है। इस के बारे में जॉन स्टुअर्ट मिल ने कहाँ है कि - **"**परिवार की संरचना ऐसी होती है कि तमाम सुविधाएँ हासिल होती है बल्कि 'प्रजा को अपने शासक' से अतरंग संबंध रखना होता है।**"68** यानी की पुरुष प्रधान समाज में परिवार का मुखिया पुरुष ही होता है।

नारी की मानसिकता को व्यक्त करती हुई सिमोन द बोउबार लिखती है **"**नारी के लिए प्रत्येक पुरुष में एक महान देवता स्थित है। किसी आदर्श देव में पुरुष रहस्यमय तत्व की तरह स्थापित है और पिता, पति तथा प्रेमी उसकी धुंधली छाया मात्र है।**"69** नारी की स्वयं कोई भी अस्मिता नही है। जब तक वह माँ के घर होती है तब उसे पिता और भाई के विचारों के अनुरुप जीवन निर्वाह करना पड़ता है। नारी का उपयोग कठपुतली की भांति किया जाता है। उसके जीवन से जुड़ी डोर एक हाथ से दूसरे हाथ में चली जाती है। नारियाँ को गुलामी में जीना पड़ता हैं, क्योंकि पुरुष प्रधान समाज की संरचना ही ऐसी है। सिमोन द बोउबार लिखती है कि- **"**औरत को औरत होना सिखाया जाता है। औरत बनी रहने के लिए उसे अनुकूल किया जाता है।**"70** पहले से ही नारियों के मन में इस बात को बिठा दिया जाता है कि वह मात्र औरत है, यहाँ औरत से तात्पर्य पुरुषों से काफी अलग है, उसे पुरुष जितना मान-सम्मान नही मिलेगा। अगर कोई स्त्री पितृसता की नैतिकता या मर्यादा को तोड़ती है तो उसकी सजा है मोत, तलाक, चरित्र हीनता वेश्या या सामाजिक बहिष्कार। लेकिन यही नैतिकताएँ और मर्यादाएँ पुरुष के पक्ष में कभी नहीं दिखाई देती। प्रचलित पितृसता से संबंधित वातावरण के परिणामस्वरुप उत्पन्न पुरुष व नारी मानसिकता को रेखांकित करते हुए मेरी वोलस्टन क्राफ्ट ने लिखा है कि - **"**समृद्धि और आनुवंशिक गौरव ने नारियों को शून्य बना दिया है ताकि अंको को सार्थक बनाया जा सके तथा अकर्मण्यता ने शृंगारिकता व स्वेच्छाचारिता का एक सम्मिश्रण

उत्पन्न किया है जो ठीक उन्हीं पुरुषों को, जो अपनी प्रेयसी के दास होते हैं, अपनी भगिनी, पुत्रियों और पत्नियों पर निरंकुश शासन के लिए प्रवृत करता है। यह उन्हें निचली श्रेणी में पदस्थ करना मात्र है, यही यथार्थ है।**"71**

हमारा भारत देश का प्रधान पुरुष समान को माना जाता है। हमारे समाज ने नारी के सामने लक्ष्मण रेखा खींच दी है। नारी कही भी जाऐ उसे लक्ष्मण रेखा ही नजर आती है। नारी अधिकारों को दर-किनार कर पुरुष ने अपने अधिकार को ज्यादा उचित माना। अर्थात् शरीर उसका और दिमाग पुरुष का। जिसमें नारी के उन्नति के स्थान पर उनकी अवनति के गुण समाहित रहते है। क्योंकि पुरुष ने उन्नति के गुण अपने पास रख लिए और अवनति के गुण नारी पर कस दिये। न चाह कर भी जिस तरह पक्षों को मनुष्य की भाषा रटा दी जाती है। इस संदर्भ में जॉन स्टुअर्ट मिल कहते है कि - **"**वास्तविकता यह है की विविध सामाजिक क्षेत्रों में नारियाँ की रुचि और क्षमता को कभी परखा ही नही गया है, पीढ़ी-दर-पीढ़ी घरेलू कामों के लिए ही उन्हें तैयार किया गया है और बाहरी क्षेत्रों में रुचि तक के विरुद्ध तमाम सामाजिक-संस्कारिक वर्जनाएँ आरोपित करके उनकी चेतना को अनुकूलित कर दिया गया है।**"72** प्रारंभ से ही उसे घरेलू काम में इतना व्यस्त कर दिया गया है कि वह किसी अन्य कार्य को करने की कोशिश ही नही कर पाती। नारी को संस्कार के रुप में उसे कई जिम्मेदारियाँ दे दी गई है। सकारात्मक विचारधारा ने नारी चेतना का संचार किया। उसे शिक्षा प्राप्ति की तरफ अग्रसर किया। इसके बारे में गांधी जी ने कहाँ है कि - **"**जिस तरह मनुष्य अपनी प्रवृति के क्षेत्र में सर्वोच्च स्थान का अधिकारी माना गया है उसी तरह नारी भी अपने प्रवृत्ति के क्षेत्र में मानी जाती चाहिए। स्त्रियाँ पढ़ना-लिखना सीखे और उसके परिणाम स्वरूप यह स्थिति आयें ऐसा नही होना चाहिए। यह

तो हमारी सामाजिक व्यवस्था की सहज अवस्था ही होनी चाहिए।**"73** यानी की जिस तरह मनुष्य उसकी प्रतिष्ठा के अनुसार प्रोत्साहित किया जाता है उसी तरह नारी को भी उसकी प्रतिष्ठा के क्षेत्र में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जब वह ज्ञान प्राप्त करें और तेजस्वी व पराक्रमी बने फिर अपने अधिकारों की मांग करे, उससे पूर्व ही उसे उससे संबंधित अधिकार दे देने चाहिए। पुरुष ने नारी को अनगिनत नामकरणों की उपाधियों से संबोधित किया। कभी उसे देवी तुल्य समझा तो कभी शारीरिक पूर्ति का साधना उसे प्रथाओं के शिकंजे में बांधे रखा। इस के बारे में सिमोन द बोउवार लिखती है कि - "स्त्री न देवी है न राक्षसी। वह मानवी है, जिसे समाज की फूहड़ प्रथाओं ने दासता में जकड़ कर रख दिया है।**"74** जर्जर व गलत सामाजिक व धार्मिक परम्पराएँ कही न कही पुरानी घिसी पिटी मान्यताओं का प्रतिनिधित्व कराती है। नारी को अगर नारी बनना है तो उसे अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए मानवीय मूल्यों के प्रति जागरुक होना पडेगा। महादेवी वर्मा ने लिखा है कि - "युगों के अनवरत प्रवाह में बड़े-बड़े साम्राज्य बह गये, संस्कृतियाँ लुप्त हो गई, परंतु भारतीय नारियाँ के ललाट में विधि की बजलेखनी से अंकित अदृष्ट लिपि नहीं धुल सकी। आज भी जब सारा गतिशील संसार निरंतर परिवर्तन की अनिवार्यता प्रमाणित कर रहा है, नारियाँ के जीवन को काट-छाँट कर उसी साँचे के बराबर बनाने का प्रयत्न हो रहा है जो प्राचीनतम युग में ढाला गया।**"75**

भारतीय समाज में नारी कोशिश करेंगी तो वह अपने अधिकारों को प्राप्त करके बन्धनो से मुक्त हो जाती है। बहुत सारे रास्तें उसके लिए खुल जाते है। इसलिए सबसे प्रथम प्रयास उसके द्वारा हो यह ज़रुरी है। नारी जब तक स्वयं को नही पहचानेगी तब तक कोई और उसकी कद्र नहीं करेगा। आखिर वह भी एक मानव है और उसे भी मानवता का दर्जा

प्राप्त होना चाहिए। लेकिन जब तक वह अपनी शक्ति को नही पहचानेगी तब तक वह अपने अधिकारों से वंचित रहेगी। गांधी जी ने अपने शब्दों में लिखा है कि - **"**कोई लड़की को ऐसा मानकर बैठे कि वह हमेशा के लिए अबला है, तो मैं कहता हूँ कि जगत में कोई अबला है ही नही, सब सबंला है, वे दुर्बल नही है।**"76** नारियाँ के लिए आवश्यक है कि वह अपने में छुपी हुई शक्ति को पहचाने और उज्जवल भविष्य की ओर अग्रसर हो।

देश-विदेश से संबंधित कुछ विचारकों या दार्शनिको ने नारी के संबंध में ऐसी परिभाषाएँ दी हैं, जिसके कारण नारी को पुरुषों की तुलना में कमजोर माना गया है। उन परिभाषाओं में नारी पुरुष से संबंधित अधिकतर मान्यताओं में नारी को पुरुष से कमजोर रेखांकित किया गया। अरस्तू ने नारी की परिभाषा यह कहकर दी है कि - **"**औरत कुछ गुणवत्ताओं की कमियों के कारण ही औरत बनती है। हमे नारी के स्वभाव से यह समझना चाहिए कि प्राकृतिक रूप में उसमें कुछ कमियां है वह एक प्रासंगिक जीव है। वह आदम की एक अतिरिक्त हड्डी से निर्मित है। अत: मानवता का स्वरूप पुरुष है और पुरुष औरत को औरत के लिए परिभाषित नहीं करता, बल्कि पुरुष से संबंधित ही परिभाषित करता है।**"77**

हमारे समाज में नारी को सोचने का अवकाश मिले कि कुछ नया कर सकती हैं तो वह करेंगी। लेकिन प्रारंभ से ही नारी होने का एहसास दिलाया जाता है। विनोबा यह लिखते है कि - **"**आने वाले जमाने में दुनिया की हालत ऐसी होने वाली है कि समाज को जो रक्षण पुरुष दे सका, वह नारियाँ दे सकेंगी। पुरुषों ने सारा मामला बिगाड़ दिया है, ऐसी हालत में नारियाँ केवल स्वरक्षित ही बनकर कृतकृत्य न हो जाये, बल्कि वे सारे समाज के रक्षण का भी भार उठाये। विज्ञानयुग ने ऐसी

परिस्थिति पैदा कर दी है। अब रक्षण की संपूर्ण ज़िम्मेदारी अहिंसा पर ही आनेवाली है और इसीलिए अब नारियाँ ही समाज रक्षक हुये बनने वाली है।"**78**

आजकल हम जब आधुनिक बनने और बनाने की दौड़ में हैं वह केवल बाह्य दिखावे के अलावा कुछ भी नही। हमारी मानसिकता तो वही पुरानी है। जिसमें आज भी कोई बदलाव नही आया। अगर व्यवहारिक रुप में देखें तो पुरुष का जितना महत्व है, नारी का भी उतना ही महत्व है। दोनों एक दूसरे से कतई अलग नहीं है। जॉन स्टुअर्ट मिल के जीवन में श्रीमती हैरियट टेलर की प्रतिभा, योग्यता, रचनाशीलता और सौदर्य ने उन पर गहरा प्रभाव डाला। उनके जीवन और विचारों ने मिल की इस धारणा को मजबूत बनाया। वे कहते है कि - "नारियाँ बौद्धिक क्षमता में पुरुषों से कदापि पीछे नही है और वह उनकी सामाजिक पराधीनता ही है जो उनके स्वंतत्र व्यक्तित्व और सर्जनात्मकता को कुचलकर रख देती है।"**79** ऐसा नहीं है, कि नारियाँ पुरुषों से पीछे हैं। वह कोई कार्य करती है तो उसे पूर्ण करके ही छोड़ती है, बल्कि अच्छे से ही करती है।

स्त्री उपेक्षिता की भूमिका में लिखा है कि - "मैं उन किताबों को स्वीकार नही कर सकती, जो औरत को औरत की तरह पेश करती है। मेरा विचार है कि हम सब चाहे नारी हो या पुरुष, मानव व्यक्ति के रुप में ही स्वीकारे जाएं, किन्तु नामवाद अपने आपमें एक अपर्याप्त सिद्धांत है।"**80** नारी स्वयं के स्तर पर कुछ करना चाहती है तो पुरुष उसे दर किनार कर देता है। उसकी सफलता की सीढी अपने आप को अबला रुप में प्रस्तुत कर ही प्राप्त होती है। इस परिपेक्ष्य में सिमोन बोउवार कहती है कि - "पुरुष की सहायता उसको तभी मिल सकती है, जब वह स्वयं को पुरुष की नजरो में वस्तु रुप में पेश करें और उसके सामने स्वयं गौण बनी रही।"**81** नारी अपने आप को तभी केन्द्रित कर पायेगी जब

वह पुरुष की सहायता प्राप्त कर लेगी। क्योंकि अकेले नारी सोच से नारी का उत्थान संभव नही है बल्कि इसमें पुरुष की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। आज ज्ञान-विज्ञान के उजाले ने नारी को उसके वास्तविक स्थिति से अवगत कराता है। जिसको स्वीकार कर नारी अपने वास्तविक स्वरूप प्राप्त करने में क्रियाशील है। इसके बारे में प्रभा खेतान ने लिखा है कि - **"**नारी को अमीर हो या ग़रीब, श्वेत हो काली, अपनी लड़ाई खुद लडनी होगी। यह दुनिया पुरुषों ने बनाई, पर नारी से पूछ कर नही। फ्रांस की राज्य क्रांति हो या विश्वयुद्ध नारी से पुरुष सहारा लेता है। पुन: उसे घर लौट जाने को कहता है। वह सदियों से ठगी गई है। यदि उसने कुछ स्वतंत्रता हासिल भी की है, तो उतनी ही जितनी कि पुरुष ने अपनी सुविधा के लिए उसे देना चाहा।**"82**

नारी के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए हर्षवर्धन त्रिवेदी ने लिखा है कि - **"**नारीवाद की तीन महत्वपूर्ण संज्ञाएँ है नारीवाद जो आंदोलन का राजकीय पक्ष है, नारीत्व जो जैविक स्थिति पर आधारित है। एवं नारीता जो संस्कृतिक रुप में परिभाषित गुणधर्मों का समुच्य है।**"83** अत: ही कहा जा सकता है कि नारी की अवधारणा में महत्वपूर्ण भूमिका स्वयं नारी की है। उसकी दृष्टि में पुरुष ही सर्वेसर्वा सर्वे है और उसके सहारे के अभाव में जीवन की गति संभव ही नही। फिर भी समय ने नारी के विवेक में चेतना का संचार किया है। इस प्रकार नारी की स्थिति, नारी संबंधी धारणाएँ तथा विचारों के परिणाम स्वरूप नारीवाद की अवधारणा हुई। आज नारी पूर्व की अवधारणा को त्याग कर उस अवधारणा को अंगीकार कर रही है। जिसका महत्व उसकी अस्मिता एवं अधिकार के साथ-साथ पुरुष के समतुल्य है।

3.5 भारतीय समाज में साहित्य, जीवन और नारी

हमारे भारतीय समाज में मानव ने अपने अस्तित्व की पहचान और जीवन को साहित्य के माध्यम से सुरक्षित रखने का प्रयास किया। जातिगत जीवन मूल्यों को साहित्य का दर्पण माना गया है। इसमें बिम्ब, प्रतीक, लक्षणा, व्यंजना, रस, अलंकार आदि तत्व समाहित रहते है। जिससे सामान्य लोग इससे आनंद प्राप्त करते है और सत्पात्र इसकी आंतरिक विशेषताओं को पहचान सके। साहित्य में आलोचन का भी महत्वपूर्ण स्थान है। "आलोचना साहित्यगत जीवन मूल्यों और कला मूल्यों के अवगुंठन खोलती है और योग्यो के बीच साहित्य का आस्वाद वितरित करती है। पहले तिजौरी कायम हो तभी चाबी बनेगी पहले साहित्य तैयार हो ले फिर आलोचना भी होगी। इसीलिए सभी साहित्य चिंतक लगभग एक स्वर से साहित्य को जीवन की व्याख्या और आलोचना को जीवन की व्याख्या और आलोचना को जीवन की व्याख्या के रुप में स्वीकार करते रहे है।"**84**

हमारे आम समाज में नारी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। उसको नर की अपेक्षा अधिक सम्मानीय स्थान मिला है। वह लक्ष्मी होने के साथ-साथ शक्ति का स्वरूप भी है। वह अपने एक जीवन को कई रुपों में जीती है। कभी बेटी के रुप में तो कभी पत्नी के रुप में। हर खुशी और हर ग़म में वो अपने परिवार का साथ निभाती है। उसी के रुप में पीहर की इज़्ज़त पहचानी जाती है। एक नई खुशी और एक नए बादे के साथ उसे एक नए रिश्ते में बांध दिया जाता है। वह पत्नी के रुप में दूसरा जन्म लेती है। एक माँ के रुप में नारी का तीसरा जन्म होता है। इस दुनिया में वह अपने बच्चों की परवरिश करती है और अपने बच्चों को जीने के काबिल बनाती है। अब उसे अपने बच्चों के संस्कारों से पहचाना

जाता है। अपने इन्ही गुणों के कारण या नारी का यही रुप उसे सृष्टि में सर्वश्रेष्ठता प्रदान करता है।

नारी हर संस्कृति में केन्द्ररुप रही है। सर्जन और संस्कार की वह गंगोत्री है और मानवता की वह गंगा है। भारतीय संस्कृति ने उसे अपने प्रथम चरण में ही पहला देवत्व प्रदान कर दिया था। पिता और आचार्य का देवत्व बाद की वस्तु है। अन्य 'मातृदेवो भव' यह नारी महिमा का पहला उद्घोष है। नारी श्रद्वेया है, आदरणीय है और सबसे अधिक ध्यान उसकी ओर ही जाना चाहिए, उसकी देखभाल चेतन सृष्टि का पहला कर्तव्य है, क्योंकि अधिष्ठान की सुरक्षा आवश्यक है। इस तरह मानव जीवन को सर्वाधिक रुप से प्रभावित और प्रवाहित करने वाली शक्ति नारी है। **"**संसार के रंग-मंच का वहस सर्वोत्कृष्ट जीवंत पात्र है, वह संसार की जीवंती है।**"85**

नारी पात्रों का अनेक रुपो साहित्य में चित्रित होना और साहित्य को अनेक प्रकार के प्रभावित करना सहज बन जाता है। पुराणों और वेदों में नारी को अनेक रुपो में वर्णित किया गया है। वेदों में उसके स्वतंत्र और उज्जवल रुप का अधिक चित्रण हुआ। उसकी स्थिति पुराणों में परिवर्तित हुई। हर युग में युगीन परिस्थितियों ने उसकी छवि को कही उज्जवल और कही धुंधला किया, परन्तु मानव जीवन का सत्य यह है कि नारी सामाजिक और नैतिक मूल्यों की भूमि रही है।

हम सभी जानते है कि हिन्दी साहित्य के आदिकाल से लेकर आज तक नारी के अनेक रुपो का वर्णन मिलता है। रासों काव्य में जहाँ वह सामंती व्यवस्था के शिकंजे में फंसी है वही वह अपनी पहचान के प्रति भी जागरुक है। मुगल कालीन समाज में वह भोग विलास की वस्तु बन गई। इन सब के परिणाम स्वरूप संतो ने नारी को महामाया मानते हुए

मनुष्य की प्रगति का अवरोधक माना। उसकी स्थिति को सुधारने के लिए भक्तों ने उसे ईश्वर से जोड़ दिया। वह सूफियों ने नारी को परमात्मा का बिम्ब माना। रीतिकालीन कवियों ने नारी के भोग्य रुप को अधिक महत्व दिया। अत:नारी के विविध रुपों ने साहित्य और समाज को समय-समय पर प्रभावित किया।

हमारे भारतीय समाज में नारी को पूजनीय माना गया लेकिन उसके साथ-साथ वह उपेक्षित भी रही। समाज में कभी उसकी अलग पहचान को स्वीकार नही किया गया वह अपने सामाजिक अधिकारों से वंचित रही, इसके साथ-साथ सामाजिक जन उसकी स्वतंत्रता को समाज के लिए ख़तरा मानते रहे। किसी नारी का विधवा होना उसके जीवन का सबसे बड़ा श्राप था और उसका अपने पति की मृत्यु के साथ ही सती होना उसकी पतिव्रता का सबूत था। समाज ने उसे स्वतंत्र अस्तित्व के अधिकार से दूर कर दिया तथा उसके शिक्षा प्राप्ति पर भी पाबंदी लगा दी। नारी की स्वतंत्रता उसके व्यक्तित्व और उसके आत्मसम्मान का कोई मोल नही था। नारी की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में नारी की दयनीय स्थिति सामने आने लगी। पुनर्जागरण के कारण उसकी इस दयनीय स्थिति को पाश्चात्य विचारकों ने हिन्दी साहित्य तथा अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य में वर्णित किया। इन साहित्यकारों ने नारी की दयनीय स्थिति को सुधारक उसे सम्मान दिलाने का प्रयास किया। नारी संबंधी सुधार आंदोलनों और चेतना से साहित्यकारों ने उसके अनेक पक्षों पर प्रकाश डाला। इन्होंने नारी के अनेक पक्षों को साहित्य में वर्णित किया। साहित्य की विविध विधाओं, उपन्यासों, कहानियों, काव्यकृतियों, निबंधों और नाटकों में नारी के जीवन प्रवाह को प्रवाहित किया।

हिन्दी नाटक में प्रसाद युग में एक नये अध्याय का प्रारंभ हुआ। "प्रसाद के नाटकों में उनके युग की प्रतिध्वनियाँ भी है। देश प्रेम और नारी स्वतंत्रय का आंदोलन भी वहाँ बिंबित है।"**86** इस युग के नाटककारों ने नारी के उच्च आदर्शों को नए प्रतिमान दिए। इन्होंने नारी की शक्ति को सामाजिक भूमि पर प्रस्तुत करते हुए, उसे भारतीय संस्कृति के महान आदर्शों से विभूषित किया। लेकिन इन नाटककारों ने भी यथार्थ से नारी भावना को दूर रखा।

भारतेन्दु युग में नारी की सामाजिक स्थिति पर प्रकाश डाला गया। इस युग में नारी के सामाजिक पक्षों को प्रस्तुति मिली। इस युग के नाटककारों में नारी जागरण की चेतना की कमी थी। ये पुरानी परम्पराओं पर चल रहे थे। परन्तु इन नाटककारों ने आने वाले समय के नाटककारों के लिए एक भूमिका बना दी। जिससे "नयी रोशनी में नाटककार ने अनुभव किया कि नारी के परम्परित जीवन का बंधन रुढ स्वरूप टूटने को है और टूटेगा।"**87**

कहानी में यथार्थ जगह मिलने लगी। कहानीकारों ने अनेक नये प्रयोग करके अपनी कहानी में वर्तमान की समस्याओं और विसंगतियों को प्रस्तुत किया। जिन्होंने नारी समस्या के अनेक पहलुओं को अपनी कहानी के द्वारा प्रस्तुत किया। नारी स्वतंत्रता और नारी चेतना की धारा धीरे-धीरे बहने लगी, परन्तु इसके साथ- साथ नारी जीवन में विवाह, दहेज़ प्रथा, आर्थिक परिस्थितियाँ, पति-पत्नी का द्वंद यौन संबंधों की विकृतियाँ आदि अनेक समस्याओं ने नारी जीवन में अपनी जगह बना ली है।

3.6 भारतीय हिन्दी साहित्य में नारी विषयक दृष्टिकोण

हमारे भारतीय हिन्दी साहित्य में नारी संबंधी अलग-अलग दृष्टिकोण मिलते है। प्राचीन काल से ही अनेक प्रकार की कुरीतियाँ जैसे

जाति-प्रथा, छूआछूत, दहेज़ प्रथा, बाल विवाह, बहु विवाह, विधवा विवाह निषेध आदि कुरीतियाँ है जिन्होंने नारी जीवन को नरक बना दिया है।

राधाचरण गोस्वामी जी की 'स्त्री सेवा पद्धति' रचना है, जिसमें नारी स्वभाव को प्रस्तुत किया गया है। "पुरुष अहेरी की नारियाँ अहेर शीर्षक निबंध में बालकृष्ण भट्ट जी ने पुरुषों को नारियाँ द्वारा अपने वश में करने उन्हें अपना शिकार बनाने पर व्यंग्य मिलता है।"**88** नारी स्थिति को लेकर अन्य नाटक, प्रहसन और रुपक लिखे, जिनमें प्रमुख हैं - गोपालराय गहमरी का विधा विनोद, लाला काशीनाथ खत्री का बाल विधवा संताप आदि। 'प्रेम की वेदी' में प्रेमचंद जी ने अंतर्जातीय विवाह के युग प्रश्न को उठाया है।

भारत के समाज में नारी हमेशा से अंधविश्वासों और जादू-टोनो जैसी रुढियों से ग्रस्त रही है। पढ़ी-लिखी और अनपढ़ दोनों ही प्रकार की नारियाँ इस प्रवृत्ति के शिकंजे में जकडी हुई है। हमारा नारी समाज संकट आने पर पंडितों और जादू-टोना करने वालों के पास भागता है उनकी झूठी बातों का शिकार बन जाती है हिन्दी साहित्य में इस अंधविश्वास और रुढिवादिता की आलोचना की गई है।

आधुनिकता के इस दौर में बढ़ती हुई आधुनिकता ने तेजी के साथ हमारा नैतिक हास किया है। इसके साथ-साथ हमारे चरित्र में भी गिरावट आई है। श्री लाल शुक्ल ने आधुनिक जीवन के रहन-सहन पर व्यंग्य 'लखनऊ' शीर्षक के द्वारा प्रस्तुत किया है। "फैशनेबल दुबली-पतली, लड़कियाँ जिनके जीवन का मुख्य कार्यक्रम अपनी ओर लफंगों को आकर्षित करना था - कूल्हे, वक्ष और टखने मात्र से संपूर्ण मचलती चली जा रही थी। चमचमाती दुकानों पर चालाक छोकरे ढीली बुरशर्टो, लहलहाते

बालो और चूड़ीदार पैटो में कसे हुए पुल्लिंगवती वेश्याओं की तरह बैठे थे।**"89**

इस तरह हिन्दी साहित्य में नारी के प्रति अलग-अलग दृष्टिकोण मिलते है। कही पर नारी को समस्याओं को लिया गया है, तो कही पर नारी की स्वच्छंदतावादी रुप में लिया गया है। दो प्रकार के दृष्टिकोण मिलते है, जो निम्नलिखित है।

(3.6.1) हिन्दी साहित्य में पारम्परिक दृष्टिकोण से नारी

हमारे भारतीय समाज में एक तरफ जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते है। यह पंक्ति उचित है तो एक तरफ **"**स्त्रियश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो ना जानाति कुतो मनुष्य:।**"90** नारी को जब तक संतान या पुत्र की प्राप्ति नही होती तब तक उसका नारी जीवन व्यर्थ ही माना जाता है। इसी सोच और रुढ़िवादी मानसिकता के कारण नारी जाति ने बहुत अन्याय और अत्याचार सहन किए है।

अनेक युग नारी में सामिल है। वह ममता, स्नेह, त्याग और दया की प्रतिमूर्ति होती है। उसके इन्ही गुणों पर यह सृष्टि गतिमान है। नारी मानव जीवन को पूर्ण करती है। उसे संसार की जननी माना जाता है। उसका मातृत्व का रुप सबसे उत्तम और त्यागपूर्ण रुप है। इसी रुप में उसकी सबसे बड़ी साधना छुपी हुई है। नारी को हमेशा से पुरुष की धरोहर समझा गया है। पुरुष समाज ने उन्हें अपने नियंत्रण में चलने के लिए बाध्य किया है। अधिक स्वतंत्रता को नारी के लिए आरंभ से ही अनुचित माना गया है। रामचरित मानस में गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है कि - **"**नारी की वैचारिक स्वतंत्रता को सही माना है लेकिन उसकी प्रवृतिगत स्वच्छंदता को अनुचित तथा निंदनीय बिगड़ जाती है।**"91**

महात्मा गांधी जी ने नारी और पुरुष दोनों को समान महत्व दिया। नारी को समाज द्वारा उपेक्षित समझे जाने को गांधी जी ने हिन्दू समाज का दुर्भाग्य माना। वे दोनों को एक बराबर सम्मान के पात्र समझते थे। नारी जाति के साथ हमेशा से भेदभाव होता रहा है। हिन्दू समाज में उसे अपने प्रियजनों की मृत्यु हो जाने पर श्मशान घाट तक जाने की अनुमति तक नही है। हिन्दू समाज में दाह संस्कार या अग्नि देने का अधिकार केवल पुत्रों को ही प्राप्त है। लड़कियों को यह अधिकार प्राप्त नही है।

"अयोध्या कांड में उन्होंने नारी की शारीरिक पवित्रता तथा पतिव्रत्य प्रकृति को उसके अपने विकास के लिए तथा मानव समाज के सांस्कृतिक विकास के लिए उत्तम तथा अनिवार्य माना है।"**92** हमारे समाज में अल्पायु से ही लड़कियों के मन में असुरक्षा का भाव भर दिया जाता है। उसके रहन-सहन, तौर-तरीकों पर हमेशा सभ्यता लाद दी जाती है। ऐसे में कुछ लड़कियाँ विवाह करके और कुछ अविवाहित रहकर इस असुरक्षा के भाव से मुक्ति पाना चाहती है।

भारतीय समाज में आजकल बाल-विवाह को कुरीति के रुप में मानते है, लेकिन जब ये विवाह होते थे उस समय ये समय की मांग थी। इसके पीछे सामाजिक और आर्थिक कारणों का जिम्मेदार माना गया है। पाँच-छ पुत्रियों का विवाह कम उम्र में ही कर देते है। आगे चलकर इसने विकृत रुप धारण कर लिया तथा इस रीति-रिवाज़ का गलत प्रयोग किया जाने लगा। इस बाल विवाह के कारण कितनी मासूम कन्याएँ अपना बचपन खो देती है। सती प्रथा भी नारी अत्याचारों में से एक है। इसका प्रारंभ राजपूतों से हुआ लेकिन धीरे-धीरे इस प्रथा के प्रभाव में ब्राह्मण समाज भी आ गया। निम्न ब्राह्मण समाज में इस प्रथा का प्रतिशत कम था जबकि यह प्रथा उच्च कुलीन ब्राह्मण समाज में अधिक फैल गई है। बाल विवाह होने के कारण लड़कियाँ छोटी उम्र में ही विधवा हो जाती थी।

उन्हें अपनी जिन्दगी या तो विधवा के रुप में काटनी पड़ती या सती होना पड़ता था।

हमारे भारत देश में **"**स्वाधीनता की लड़ाई में महिलाएँ गांधी जी के विचारों से प्रभावित हुई। गांधी जी ने भी महिलाओं को घर से बाहर निकाल कर आज़ादी की लड़ाई में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। नारी शक्ति ऊपर कर सामने आई। नारी स्वतंत्रता को गांधी जी ने महत्व दिया। गांधी जी ने नारी शिक्षा पर बल दिया। परन्तु उन्हें अपना घर, परिवार छोड़कर अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाने की आज़ादी नही दी।**"93**

हम देखें तो परम्परागत नजर से देखें तो नारी अनेक अत्याचारों तथा अन्यायों से गुज़री है। इसके साथ ही उसने अनेक कुप्रथाओं का सामना किया है। उसे अनेक अधिकारों से वंचित रखा जाता था। रुढियों को न मानने वाली विधवा नारी को हीन भावना से देखा गया। पर्दा प्रथा प्रचलित थी। मध्यकालीन आदर्शों ने उसके जीवन में घुटन और अनेक विषमताओं को पैदा कर रखा जाता है।

(3.6.2) हिन्दी साहित्य में आधुनिक दृष्टिकोण से नारी

भारत में आधुनिक काल में प्राचीन और मध्यकाल की तुलना में अनेक बदलाव आते गए है। अधिकतर हमारे रहन-सहन के तौर-तरीकों और नैतिक मूल्यों में परिवर्तन आ रहा है। इन बदलावों के साथ ही आधुनिक काल की नारी में भी बदलाव आता देखा जा रहा है। आधुनिक काल की नारी प्राचीन और पारम्परिक नारी से बिलकुल भिन्न है। पहले की नारी पर बंधनों की पाबंदी और नियंत्रण था लेकिन आज वह इन सब से दूर है और स्वतंत्र विचारधारा से जीवन जी रही है।

हमारे देश में स्वातंत्र्योतर काल में नारी जागृति को बल मिला। इस काल में नारी को विभिन्न क्षेत्रों में सम्मान प्राप्त हुआ। नारी पुरुषों

में समानता का भाव पैदा होने लगा। शिक्षित तथा योग्य नारी आधुनिक समय में अपने आप को आत्मनिर्भर बना सकती है। नारियाँ की सामाजिक स्थिति में सुधार हुआ। भारतीय नारी ने समय के साथ-साथ और स्थितियाँ के अनुसार अपने आप को बदला। वह अपने मान-सम्मान और प्रतिष्ठा के प्रति पहले से अधिक सावधान हुई है। आधुनिक नारी अपने जीवन में दो महत्वपूर्ण अदा कर रही है। वह घर में और पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है।

नारी जाति का अशिक्षित होने के कारण अनेक सामाजिक कुरीतियों को बढ़ावा देना है। शिक्षा ही जागृति का भाव पैदा करती है और आत्मबोध से परिचित करवाती है। "किसी समाज या देश की स्थिति कैसी है। इसका सर्वोत्तम परिचय उस समाज या देश में नारी की स्थिति कैसी है इससे मिलता है। स्वाधीनता के संघर्ष के साथ भारतीय नारी की दयनीय स्थिति के प्रति लोगों में चेतना पैदा हुई। यह इस शताब्दी की विशेषता है। ध्यान देने की बात है कि पश्चिमी देशों में औधोगिक क्रांति पहले आई। नारी चेतना बाद में। इसके विपरीत भारत के नारी समाज में राजनीतिक चेतना पहले आई। औधोगिक क्रांति बाद में। संविधान ने उसे पुरुष के समान दर्जा प्रदान किया, समानता की गारंटी दी। किन्तु इस सच्चाई से इंकार नहीं किया जा सकता कि अनेक अधिकार प्राप्त होने के बावजूद आम भारतीय नारी आज भी शोषण की शिकार है।"**94**

नारी शिक्षा को महत्वपूर्ण मानते हुए गोपाल कृष्ण गोखले ने 1912 में सिविल मैरिज एक्ट के विषय में बोलते हुए कहा कि - "नारियाँ में यदि शिक्षा का प्रसार हो जाए तो लड़कियाँ विवाह देर से करेंगी उससे स्त्रियाँ की व्यक्तिगत स्वतंत्रता सुरक्षित होगी।"**95**

नारी की उन्नति और प्रगति के लिए राजाराम मोहन राय, महात्मा गांधी, महर्षि कर्वे, ईश्वर चन्द्र विधा सागर, महादेव गोंविन्द रानाडे, ज्योतिरावफुले आदि ने अनेक प्रयत्न किए तथा उन्हीं के प्रयत्नों के परिणामस्वरुप आज की नारी स्वतंत्रता का उपभोग कर रही है। महात्मा गांधी जी ने कहा है कि - "हर लड़की हर एक हिन्दुस्तानी लड़की ब्याह करने को जन्म नही लेती। मैं आज बहुत सी लड़कियों ऐसी बता सकता हूँ जो एक आदमी की खिदमत करने की बजाय अपने को देश की सेवा के लिए अर्पण कर रही है।"**96**

दयानन्द सरस्वती का शिक्षा शास्त्री के रुप में महत्वपूर्ण योगदान रहा। उन्होंने नारी जाति को बुद्धिमान, शक्तिशाली तथा आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर होने की सलाह दी है। राजाराम मोहन राय ने अपने समय की अनेक कुरीतियों का विरोध किया। सती प्रथा, बाल-विवाह आदि प्रमुख थी। राजाराम मोहन राय ने सती प्रथा के पीछे आर्थिक कारणों को जिम्मेदार माना था। वो कहते है कि - "स्त्रियों को पति की मृत्यु के उपरांत केवल तीन ही मार्ग बचते है या तो वह विधवा के रुप में परिवार के किसी व्यक्ति पर निर्भर रहे या फिर पति के साथ अपने आप को ज़िन्दा जला दे।"**97** इसलिए राजाराम मोहन राय ने इस प्रथा के विरुद्ध आवाज़ उठाई। इस प्रथा को समाप्त करने के लिए राजाराम मोहन राय ने मानवतावादी तथा बुद्धिवादी दृष्टिकोण अपनाया।

आधुनिक युग में नारी भावना ने अनेक रुप ग्रहण किए है। भारतेन्दु युग से लेकर अब तक नारी भावना में कई परिवर्तन आए है। पाश्चात्य प्रभाव के कारण नारी आज अपने देवी रुप की बजाय अपने नारी रुप को पसंद करती है। वह अपने पति की साथी और अच्छी मित्र बनी है। साहित्य में उसे अनेक रुपो में देखा है। प्रसाद ने उसे श्रद्धा से विभूषित किया तो पंत ने उसे साथ चलने वाली सहचरी माना। वही पर

निराला ने नारी में शक्ति का रुप देखा और महादेवी वर्मा ने नारी को करुणा के रुप में प्रतिस्थापित किया।

देश में अनेक नारियाँ ने अपना गौरव स्थापित किया। जिनमें श्रीमती इंदिरा गांधी भारत की पहली महिला प्रधानमंत्री बनी थी। विजय लक्ष्मी पंडित संयुक्त प्रांत से निर्वाचित हुई तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य मंत्री बनी। अनेक नारियाँ ने अपनी लेखनी के द्वारा महिला शक्ति को उद्घाटित किया। मदर टेरेसा ने देश की सीमा से ऊपर उठकर मानवता का परिचय दिया। इन्होंने मानवता को सर्वोपरी माना और समाज सेवा की। मदर टेरेसा को 1989 में नोबेल शांति पुरस्कार मिला तथा वो विश्व में प्रख्यात हुई।

समाज में शोषण करने वाली कुरीतियों जैसे दहेज़ प्रथा उदाहरण के तौर पर बहोत सारे है, जो ये साबित करते है कि महिलाओं ने हर क्षेत्र में अपनी पहचान बनाई है। इसके साथ ही जिस क्षेत्र में नारियाँ कदम रखा उस क्षेत्र को प्रगति की नई दिशा भी दी है। जहाँ सिर्फ पुरुषों का स्थान होता था, आज नारियाँ ने अपनी जगह बना कर अपने आप को साबित किया और यह भी साबित कर दिया कि वह घर के साथ-साथ देश, कम्पनी, सेना अथवा हर क्षेत्र में नेतृत्व कर सकती हैं और उन्हें नई ऊँचाइयों तक पहुँचा सकती है। बलात्कार, वेश्यावृति और अन्य शोषणों का आधुनिक नारियाँ खुलकर विरोध करती है। वह आत्मनिर्भर बनने के कारण स्वच्छंद जीवन व्यतीत कर रही है, जिसके कारण उसकी सोच में अंतर आया है और इसी अंतर के कारण विवाह के प्रति भी उसका नज़रिया बदला है। विवाह के संदर्भ में भी उसने पुरानी रुढियों को त्याग दिया है। भविष्य दृष्टा प्रेमचंद ने दो सखियाँ में विवाह के बारे में लिखा है कि - "मैं विवाह को आत्मविश्वास का साधन समझता हूँ। स्त्री-पुरुष के संबंध का कोई अर्थ है, तो यही है। वासना में विवाह की जरुरत नही

समझना। विवाह का उद्देश्य केवल यही है कि स्त्री और पुरुष एक दूसरे की आत्मोन्नति में सहायक हो।"**98**

आधुनिक नारी ने जहाँ अपनी उन्नति की है उसी के साथ-साथ वह पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से भी प्रभावित हुई है। पश्चिमी सभ्यता के रंग में रंगने के कारण वह संयुक्त परिवार की परम्परा से कटती हुई एकल परिवार में रहना अधिक पसंद करने लगी। वह स्वच्छंद होकर आज अनेक बुरी आदतों का शिकार होती जा रही है। जो उसकी सफलता में बाधा उत्पन्न कर सकता है।

3.7 हिन्दी कथा साहित्य में नारी

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। जैसा समाज वैसा साहित्य। जब समाज में नारी की स्थिति बदली तो साहित्य में भी नारी का परिवर्तन रुप दिखाई पड़ने लगा। अभी तक साहित्य में पतिव्रता नारी आर्थिक रूप से परावलम्बी नारी, पारंपरिक मूल्यों के नाम पर कष्ट भोगती नारी, देवी गृहलक्ष्मी त्यागमयी जैसे मनलुभावने विशेषणों से युक्त नारी, अशिक्षित नारी, अपनी अस्मिता के प्रति उपेक्षा भाव रखने वाली नारी, अपने अधिकारों के प्रति चेतना शून्य नारी आदि जैसे रुपों का वर्णन हो रहा था। साहित्यकार साहित्य में नारी के इस प्रकार के रुपों का वर्णन करना ही अपना कर्तव्य मान रहे है।

हिन्दी कथा साहित्य में नारी जीवन के द्वंद का भी बड़ा ही मनोवैज्ञानिक चित्रण किया है और उसे द्वंदों से मुक्ति दिलाकर उसकी स्वतंत्रता के पक्ष में अपना मत व्यक्त किया है नारी के लिए स्वतंत्रता एक अनिवार्य शर्त है। राजनीतिक सामाजिक स्तर पर नारी की स्थापना और गरिमा के लिए काफी प्रयास हुए। नारी का सुखद भविष्य उसे न्याय

समानता और स्वतंत्रता प्रदान बिना संभव नही। परंपरागत नारियों का बंधन तोड़ना ज़रुरी बना है।

वैसे तो आज कई पीढ़ियाँ साथ-साथ लिख रही है। परन्तु पिछले दशक में ही शामिल हुई कथाकरों जैसे काफी चर्चित है। इनमें आदिवासी नारियों और मुस्लिम चरित्रो का अंतर्मन तक गहराई से खोला गया है। नारी मन की कोमल संवेदना बड़ी संजीदगी से अंकित करती है। देह की मादकता से बंधी है। परन्तु हलकी भावुकता से बच कर लिखने में सफल हो रही है। उधर अल्पना मिश्र दस्तक दे रही है। यहाँ यह महानगर तक सीमित नहीं है। कस्बे-देहात से लेकर आदिवासी और ग्रामीण परिवेश में नारी का रुप चित्रित हो रहा है। वास्तव में हिन्दी का लेखन एक समृद्ध परंपरा का निर्माण करने में समर्थ हुआ है। यह युवा पीढ़ी अपनी सृजनधात्री और संघर्षशील लेखन से हिन्दी साहित्य को और भी समृद्ध करेगा।

मुश्किल से तीस-पैंतीस वर्ष हुए जब साहित्य में नारी और दलित चेतना की आहट सुनाई पड़ी है। यूरोप के अनेक देश की कई भाषाओं में नारी रचनाकारों को बड़े-बड़े पुरस्कार यहाँ तक की नोबल पुरस्कार तक मिले। नारी भारतीय स्थितियों में और हिन्दी साहित्य में पहली बार मध्यकाल में मीराबाई के काव्य और व्यक्तित्व में उभरता दिखाई पड़ता है। वह 15 वी शताब्दी की एक ऐसी विद्वोहिणी प्रतिभा थी जिसने नारी अस्मिता का एक अभूतपूर्व इतिहास रचा था।

(3.7.1) हिन्दी काव्य साहित्य में नारी

हमारा देश यानी के प्राचीन भारतीय समाज नारी को बहुत ही सम्मान देता था। उस समय नारी की तुलना देवताओं से की जाती थी। जैसे विधा, बुद्धि, विभूति और शक्ति के रुप में क्रमशः सरस्वती, लक्ष्मी

एवं पार्वती या दुर्गा का पूजन होता था। यथा 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता' कहकर उसकी भूयसी प्रशंसा की जाती थी। वैदिक काल में नारियों को मंत्रों की रचना करने सभा समिति और युद्ध में भाग लेने राजकीय कार्यो में शामिल होने, गृहजीवन में निर्णय लेने का भी अधिकार था। मध्यकालीन कवि कबीर दास के दोहे से नारी की अवहेलना का स्पष्ट चित्र मिलता है।

"नारी तो हम भी करी जान नही विचार,

जब जाना तब परिहरी नारी बड़ाविकार।

नारी की छाई परत ही अंधा होत भुजंग,

कबिरा तिन की कौन गति, नित नारी को संग।**"99**

आधुनिककाल में तो इन कुरीतियों की हत्या कर दी गई। परन्तु दहेज़ प्रथा, अपहरण, बलात्कार आदि कुरीतियाँ तमाम हद को पार कर गई। जिस दुखदायी दशा को देखकर कवि रो उठता है और गुप्तजी के शब्दों में लिखा गया है कि -

"अबला जीवन हाय ! तुम्हारी यही कहानी,

आंचल में है दूध और आँखों में पानी।"100

साहित्य समाज का दर्पण है। समाज की बुराइयों का पर्दाफाश करने तथा उसे सुधारने में साहित्य का बड़ा योगदान रहता है। नारी की इस उपेक्षित अवस्था ने हजारों महिला साहित्यकारों को जन्म दिया है। प्रायत: संस्कृत से लेकर आज तक लगभग सभी भाषाओं में इन लोगों ने अपनी लेखनी चलाई और पुरुष साहित्यकारों की तरह प्रशंसा और सम्मान भी हासिल किया।

हिन्दी साहित्य के पन्ने पलटने से हजारों नारियाँ साहित्यकार हमारे सामने आयेगे जो कि पुरुष साहित्यकार के समकक्ष कंधे से कंधा मिलाकर अपने लक्ष्य में अडिग है और होगी। जिसके फल स्वरूप अनेक सम्मान से ये लोग सम्मानित हुई है। नारियाँ को प्रेरणा देते हुए पंत जी ने लिखा है कि -

"मुक्त करो नारी को मानव,
चिर बंदिनी नारी को,
युग-युग की निर्मल कारा से,
जननी सखी प्यारी को।"**101**

समाज को सुधारते हुए नारी को आगे बढ़ाने और उसे दृढ बनाने के लिए प्रसाद जी भी ने कहा है कि -

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास-रजत-नग-पग-तल में।
पीयूष स्त्रोत-सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में।"**102**

आलोच्य काल के कवियों ने प्रेम के भी आदर्श स्वरूप को ग्रहण किया। प्रियप्रवास, साकेत, मिलन आदि में उसका उदात स्वरूप देखा जा सकता है। राधा सम्पूर्ण विश्व में कृष्ण की क्रांति के दर्शन कर विश्व-प्रेमिका और विश्व- सेविका बन जाती है। उर्मिला अपने मन को प्रिय-पथ का विध्न बनने से रोकती है। प्रेम जीवन की अदभुत शक्ति है तथा उसके बिना जीवन निस्सार है। रामनरेश त्रिपाठी ने अपने शब्दों में नारी की प्रेम की महिमा के बारे में लिखा है कि -

"गन्ध विहीन फूल हैं जैसे चन्द्र चन्द्रिका-हीन।
यों ही फीका है मनुष्य का जीवन प्रेम-विहीन।।
प्रेम स्वर्ग है, स्वर्ग प्रेम है, प्रेम अशंक अशोका।
ईश्वर का प्रतिबिम्ब प्रेम है, प्रेम ह्रदय-आलोक।।"**103**

सत्यनारायण कविरत्न की कविता पर यत्किचित् युग-चेतना का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। नारी शिक्षा के विषय में भ्रमरदूत की यशोदा कहती है कि -

"नारी-शिक्षा निरादरत जे लोग अनारी,
ते स्वदेश-अवनति-प्रचंड-पातक अधिकारी।
निरखि हाल मेरो प्रथम, लेउ समझि सब कोई,
विधा-बल लहि मति परम अबला सबला होइ।"**104**

हिन्दी साहित्य के गहन अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि एक हजार साल के इतिहास में नारियाँ साहित्यकारों की रचना प्रायत: मध्ययुग यानी भक्तिकाल से ही शुरू होती है। आदिकाल में मुसलमान शासको ने नारी को स्वछंद रुप से प्रकट नही होने दिया। भक्तिकाल में शोषित हिन्दी समाज में भक्ति का **टलावन** फैलाते हुए मीराबाई ने भारतीय समाज को कृष्ण भक्ति से विमुग्ध कर दिया। उनकी कोमल वाणी ने भारतीय साहित्य में प्रेम और आशा से भरी हुई वह पवन सरिता प्रवाहित की जिसकी वेगवती धारा आज भी भारतीय अंतरात्मा में ज्यों की त्यों अबाध गति से बह रही है। कृष्ण का रुप वर्णन करते हुए वे कहती है कि -

"बसो मेरे नैनन में नन्दलाल

सांवरी सूरति मोहिनी मूरति नैना बने बिसाल

छूटू धंटिका कटि तट सोभित उर बैजंती माल।"**105**

मीराबाई को छोड़ कर भक्तिकाल में अनेक कवयित्रियों ने हिन्दी की विकास धारा में अपना योगदान दिया है। जैसे रायप्रवीन, ताज प्रताप, कुंवरबाई, जुगुल प्रिया, जनाबाई अक्कमहादेवी, ललध, गवरीबाई, गंगामती, पानबाई आदि। इनमें से अलग संत कवयित्रियों में बाबरी साहिबा, दयाबाई जैसी कवयित्रियों ने हिन्दी के विकास में अपना हाथ बंटाया।

"बावरी रावरी का कहिये मन हयै के पतंग

भरे नित भंवरी

भंवरी जानहि संत सुजान जिन्हें हरिरुप

हिये दरसावरी।"**106**

हिन्दी साहित्य में भक्ति एवं रीति काल के इन साहित्यकारों को कृतियों को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि अनेक प्रतिकूल, परिस्थितियाँ के बावजूद इन लोगों ने अपना स्वर बुलंद रखा और पुरुषों से अपने को कमजोर नही होने दिया। साथ ही हिन्दी की विकास धारा को आगे बढाया।

इस तरह काव्य में भी साहित्यकारों ने नारी के सुख दुःख सभी भाव को दर्शाने को बहोत अच्छी तरह प्रयास किया है। नारी के बारे में भी बहुत सारी काव्य बनाते है। वास्तव में मूल कविता की चेतना सौदर्य चेतना है। जिनमें गहरे जीवन अनुभवों और सौदर्य दृष्टि के स्थान पर उतेजना होगी या नकली बौद्धिकता होगी वे कविता की दृष्टि से असफल

और निरर्थक होगी। हिन्दी साहित्य में नारी कवयित्रियों ने भी बहोत अच्छा प्रदर्शन किया है। इनके उपरान्त हिन्दी साहित्य को श्रेष्ठ और समृद्ध बनाने हेतु सेवा में लगी कवयित्रियों समुत्रा कुमारी सिंह, विधापति कोकिल, विधावति मिश्र, तारा पांडेय, शकुंतला रजनी पणिक्कर, कंचनलता जिनके अवदान से आज तक यह पवन धारा बहती आ रही है।

(3.7.2) हिन्दी नाटक साहित्य में नारी

मनुष्य के जन्म के साथ ही नाटक का जन्म माना जाता है। मनुष्य की जिन्दगी जितनी प्राचीन है उतना नाटक भी है। अन्य साहित्यिक रचनाओं में नाटक का महत्व अधिक माना गया है। नाटक दो भागों में होते है जैसे कि एक दृश्य और दूसरा श्राव्य नाटक। नाटक के द्वारा कलाकार अपने दर्शकों को आनंद की अनुभूति करवाता है। नाटक में संगीत, नृत्य, ध्वनि, चित्र, समाजशास्त्र आदि समाहित होते है। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दौर में भारत में नाटक लेखन में जागरण आया। प्रसाद जी ने हिन्दी नाटकों में जान डाल दी है। नाटकों में यथार्थ को महत्व मिलने लगा।

ध्रुवस्वामिनी की नाटकीय परियोजना में नारी की स्वतंत्रता, नारी-पुरुष के संबंध, विधवा-विवाह, तलाक आदि संघर्ष युगीन प्रश्न समाएँ हुए है। यह अभिनय की दृष्टि से अत्यंत सफल रचना है। लक्ष्मीनारायण मिश्र ने इस परम्परा को और विकसित किया। इस युग के नाटककारों ने सामाजिक जीवन की समस्याओं की अपने नाटकों का विषय बनाया।

समाज विभिन्न समुदायों एवं समूहों से जुड़ा हुआ संगठन है जिस समुदाय से व्यक्ति संबंधित रहता है। समुदाय विशेष में रहने वाला व्यक्ति अपने समूह के रीति-रिवाजों रुढ़ियों आदि से पूर्ण से जुड़ा रहता है। जब व्यक्ति बाहरी जगत के सम्पर्क में आता है तो उसके संस्कार

बाह्य सत्यो को अस्वीकार कर देते है। मिल जी ने लिखा है कि - "जब पहली बार एक व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति के प्रति प्रारम्परिक संबंध एवं शांति की कामना की होगी, उसी दिन समाज की नींव पड़ी होगी।"**107**

किसी भी साहित्य का संबंध अपने युग की संवेदनशीलता तथा उसके मूल में निहित द्वंद की प्रतीक समस्याओं में रहता है। रचनाकार व्यक्ति, समाज और युग के बीच की कड़ी होता है। नाटककार समाज और युग की द्वंदात्मक गतिशीलता को आधार बनाकर कार्य करता है। वह सारी स्थितियों का उदघाटन करते हुए जनसाधारण को आत्मबोध तक ले जाता है। नाटककार आंतरिक और बाहरी दोनों स्थितियों में जगत तथा चिंतन द्वारा प्रदान किए गए आयामों के प्रति सजग रहता है। अपने नाटकों के द्वारा नये युग के निर्माण के द्वारा अपने युग की कुरीतियों, रीति-रिवाजों, आडम्बरों और पाखण्डों को प्रस्तुत करता है। "प्राचीन साहित्य शास्त्र में नायिकाओं की अनेक रुढ़ियों बन गई थी और नायिका भेद का अध्ययन साहित्य चिंतन का अंग बन गया था। नारियाँ के कार्य, स्वभाव और सामाजिक व्यवस्था के अनुसार अनेक वर्ग बने हुए थे। इन्ही वर्गो के आधार पर साहित्य चिंतन में चरित्र-चित्रण हुआ करता था।"**108**

भारतेन्दु युग

भारतेन्दु युग हिन्दी नाटक का आरंभ काल माना जाता है। इस युग में मुसलमानों के आक्रमणों के कारण शासन व्यवस्था और जन जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था। देशभक्ति और राष्ट्रभक्ति के स्थान पर ग्राम भक्ति और जातिभक्ति ने ले लिया था। इन विपरीत और उथल-पुथल वाली परिस्थितियों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जीने हिन्दी नाट्य़ साहित्य को गति प्रदान की - "भारतेन्दु हरिशचन्द्र का व्यक्तित्व ग़जब

का व्यक्तित्व था। ये न केवल राष्ट्रीय समाजसेवी के रुप में ख्याति प्राप्त हुए वरन् उन्होंने मनुष्य के हितो में अंतराष्ट्रीय दहलीजों को भी पार किया। सामाजिक नेता के साथ-साथ जब ये सृष्टा बने तो सबके अगुआ हो गए।"**109**

इस युग में सामाजिक रुढ़ियों अपनी चरम सीमा पर थी। अनेक समस्याओं ने समाज में अपने पैर फैला रखे थे। जिनमें प्रमुख है वर्ण व्यवस्था, विवाह संबंधी अनेक कुप्रथाएँ जैसे बाल विवाह, विधवा विवाह, वृद्ध विवाह, सती प्रथा, वैधव्य जीवन, भ्रूण हत्या आदि अनेक कुप्रथाओं ने हिन्दू समाज में जगह बना कर उसकी जड़ों को खोखला कर दिया था। समाज में नारी की स्थिति दयनीय थी, उसे हीन दृष्टि से देखा जा रहा है। उसकी उपेक्षा की जाती थी तथा उसे शिक्षा और सम्मान से वंचित रखा जाता था। अनपढ़ और पढ़े-लिखे दोनों ही प्रार के जन धार्मिक कर्मकाण्डों में फंसे हुए थे। स्वामी दयानंद, रामकृष्ण परमहंस आदि समाज सुधारकों ने सामाजिक रुढ़ियों को दूर करने का दायित्व अपने ऊपर लिया। इस संबंध में रमेश गौतम ने लिखा है कि - "भारतेन्दु कालीन रचनाकारों पर इन विद्वानों द्वारा चलाए गए युगीन सामाजिक, धार्मिक सुधार आंदोलनों का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। यही कारण है कि इस युग ने साहित्य और चितंन को नये उन्मेष के साथ प्रकट किया। भारतेन्दु न केवल उन सब में अग्रणी थे बल्कि आने वाली पीढ़ी के प्रेरक भी थे।"**110**

भारतेन्दु जी ने समाज में संघर्ष का कारण बनने वाले विधवा विवाह, बाल विवाह, प्रेम विवाह, बहु विवाह आदि युग प्रश्नों को अपने नाटकों में उठाया है। नाटककारों ने अनुभव किया कि नारी के परम्परागत रुप में बदलाव आ रहा है तथा वह अपने परम्परागत रुप में बदलाव लाने के लिए प्रयत्नशील और संघर्षशील है। बाल विवाह का होना और विधवा

विवाह का न होना इस संघर्ष के मूल में था। नाटककारों ने अपने नाटकों के माध्यम से जागृति लाने का प्रयास किया। उन्होंने अपने नाटकों में नारी की दीन-हीन दशा को प्रस्तुत किया। "गाय-भैंस की तरह उसे किसी भी खूंटे से बांध दिया जाता है, जो उस पर मनमाने अत्याचार करता है।"**111** इस नाटककारों ने नारी पर होने वाले अत्याचारों का विरोध किया।

नाटककार ने विधवा के पुर्नविवाह की स्वतंत्रता को समर्थन दिया है। विधवा हो जाने पर आत्महत्या कर वह जिस प्रश्न को उपस्थित करती है। उसके उत्तर में नाटककार ने स्पष्ट किया है कि शरीर के वेग को रोकना कठिन है इसलिए जो विधवा संयम न कर सके, उसे पुर्नविवाह करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। 'कालि कौतुक' नाटक में प्रताप नारायण मिश्र ने वेश्यावृत्ति जैसी सामाजिक बुराई को नाटक का आधार बनाया है। वेश्यागमन से पैदा हुई बुराईयों को और घर में नारी उपेक्षा का चित्र प्रस्तुत किया है कि किस तरह अपमान को चुपचाप सहन करके वह नारी के साथ आदर्श से अपने आप को उबार नहीं पाती।

प्रसाद युग

भारतेन्दु के पश्चात् हिन्दी नाट्य साहित्य को जयशंकर प्रसाद ने नये प्रयोगों से परिपूर्ति किया। भारत के इतिहास में यह युग राजनीतिक, सामाजिक, संघर्षों और तनावों का स्थल रहा। प्रसाद युग के नाटककारों में जयशंकर प्रसाद, बद्वीनाथ भट्ट, राधेश्याम कथा वाचक, आगाहश्र-कश्मीरी, नारायण प्रसाद, माखनलाल, बलदेव प्रसाद मिश्र, सुदर्शन जी.पी., श्रीवास्तव आदि का समावेश होता है। प्रसाद युग बहुमुखी प्रतिभा के धनी माने जाते है। उन्होंने भारतीय संस्कृति को बड़ी सूक्ष्मता से देखा और उसे अपने नाटकों में चित्रित करने का प्रयत्न किया। नारी की स्वतंत्रता

और नारी शिक्षा का द्वंद्व भारतेन्दु काल की तरह चल रहा था। परन्तु फिर भी नारी जागरूकता बढ़ी। अब धीरे-धीरे नारी वर्ग में शिक्षा का महत्व बढ़ रहा था। शिक्षित नारी अपनी सुरक्षा और अधिकारों की सुरक्षा के लिए प्रयास कर रही थी। वे उन रुढियों को तोड़ देना चाहती थी, जो उनकी हीन दशा के लिए जिम्मेदार थी तथा उन नारियों में भी जागृति लाने का प्रयास करती है।

प्रसाद से पूर्व हिन्दी नाटकों में नारी के दमित रुप का चित्रण अधिक हुआ है लेकिन प्रसाद ने पहली बार उसे आत्मगौरव से परिपूर्ति किया। उसे इतना साहस प्रदान किया कि वह अनावश्यक आवरणों को उतारकर फेंक सके। प्रसाद युगीन नाटकों की नारी में भारतेन्दु युग की नारी की तरह असमंजस्य नही है।

अपनी संपूर्णता में इस उथल-पुथल के वातावरण में गंभीरता आ गई थी और अनुभूति के स्तर पर यह संघर्ष कहीं सूक्ष्म और जटिल रुपाकार लेकर नाटकों में अवतरित होता है। गांधी जी द्वारा चलाए गए आंदोलनों से नारी को अनेक रुपो में प्रस्तुत किया। अब नारी समाज और राष्ट्र की सेवा के लिए आगे आने लगी जिनमें से नई प्रकाश किरण को प्रकाशित किया। नारी का महत्व धीरे-धीरे पुरुष समाज में भी बढ़ने लगा।

प्रसाद की नारी का प्रेम प्रथम दर्शन से शुरू होता है। यह प्रेम है तथा सागर की तरह गहरा और गंभीर है। इसमें वासना का कोई स्थान नहीं है। चन्द्रगुप्त में अंतर्जातीय विवाह का समर्थन किया गया है, इसके साथ-साथ माँ-बाप के आशीर्वाद को अनिवार्य माना गया है। ध्रुवस्वामिनी नाटक की योजना में नारी की स्वतंत्रता, नारी प्रसाद के नाटकों में नारियाँ कथा सूत्रों का संचालन करती है तथा इन्हें सफलतापूर्वक वर्गो में विभाजित कर सकते है। इनके नाटकों में नारियाँ ही पुरुषों की

प्रेरणादायिनी शक्ति है। इन्होने अपने नाटकों में नारी की महानता का प्रतिपादन किया है।

इस तरह हम कह सकते है कि प्रसाद युग के नाटकों का महत्व उनकी चरित्र गरिमा के कारण है। डॉ.नगेन्द्र के अनुसार लिखा गया है कि - "नारी पात्रों में उनके हृदय का रुप और प्राणों में बैठी हुई जिज्ञासा की टीस मिलेगी। इस प्रकार प्रसाद जी ने सभी चरित्रों में अपने व्यक्तित्व की सांस फूंक दी है। उनमें वह व्यक्तिगत चित्रण भी मिलेगा, जो सच्चे अर्थ में नाटकीय कहा जाता है।"**112**

प्रसादोत्तर काल

प्रसादोत्तर काल को हिन्दी नाटक के प्रौढ़ता का चरण कहा जा सकता है। इस युग के नाट्य लेखन में विभिन्न धाराएँ और विविधता दिखाई देती है। वृन्दावन लाल वर्मा, सेठ गोविन्ददास, उदयशंकर भट्ट, गोविन्द बल्लभ पंथ, राजकुमार वर्मा आदि नाटककारों के नाटकों पर प्रसाद युगीन प्रवृतियों का प्रभाव रहा।

यह युग के नाटककारों ने समाज, संस्कृति, सभ्यता की जड़ों को खोखला करने वाली कुरीतियों पर प्रहार करके व्यक्ति मन की कुंठाओं का विश्लेषण किया। सोमनाथ गुप्त ने लिखा है कि - "देश की राजनीतिक जागृति केवल देश प्रेम की भावना का प्राधान्य इस समय नही रहा, उसके मूल कारणों का ज्ञान और अपनी परवशता हो गई। व्यक्ति का प्रश्न नारी की स्वतंत्रता, नारी-पुरुष का पास्परिक संबंध, ये सभी विषय एक-दूसरे से इतने संबंधित हो गए कि इन्हें अलग रखना असंभव हो गया।"**113**

प्रसादोत्तर युग तनावों तथा संघर्षों का युग रहा। नाटककार व्यक्ति विशेष रुप से नारी संघर्षों से प्रभावित होता है। इस युग में नारी उन्नति का संघर्ष भी था और उस पर अंकुश रखने की कामना भी थी। "यूरोप में

इब्सन तथा शॉ ने अपने अपने नाटकों में नारी को स्वयंत्रता या क्रूर पति से संबंध विच्छेद होने की स्थिति में उसकी दशा अथवा वैवाहिक जीवन के अन्य संघर्षों को प्रस्तुत किया था।**"114**

भारतीय नारी जो अपने जीवन में दुखों को झेलती हुई नीरस जीवन जीती है। नाटककार ने उसका भी असमर्थ किया है। इन नाटककारों ने भारतीय परिवेश में नारी के समाधान को खोजने के प्रयास किए। वह शिक्षा के पक्ष में है जो व्यक्ति के अंदर संस्कार पैदा करे और जो व्यक्ति ने स्वाभिमान जगाएँ, इसी के साथ-साथ उसने अधिक से अधिक ज्ञान और समाज सेवा का भाव जागृत हो।

"नारी की जागृत स्थिति में समाज से उसका संघर्ष और परिणाम भिन्न स्तरों पर नाटककार को उद्वेलित करता रहा है, जिसे उसने भिन्न रुपों में नाटकीय परिकल्पना में संयोजित किया है। इस संयोजन में युग तथा नाटककार का संघर्ष जितना स्पष्ट है, उतना नाटक की आंतरिक रचना का संघर्ष नही।**"115**

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी हिन्दी में अधिकांश वही नाटककार क्रियाशील रहे जिन्हें प्रसादोत्तर युग के नाटककार माना गया। इस काल में विभिन्न प्रतीकों को लेकर सामाजिक नाटकों की रचना हुई। इसके साथ ही समाज में फैली बुराईयों को उदघाटित करना और उनका निराकरण करना इन नाटकों का उद्देश्य रहा है।

(3.7.3) हिन्दी उपन्यास साहित्य में नारी

उपन्यास विस्तीर्ण गई कथा है। यह कथा साधारण जीवन जैसी है पर गति में प्रखर है और इसके पात्र मनुष्य सरीखे होकर भी विलक्षण होते है। उपन्यास में मुख्यत: जीवन के ऐसे पक्ष को या ऐसे जीवन की

उभरता है और पात्रों का चरित्र उदघाटित करता है। साधारण जीवन के समान्तर चलने का पूरा प्रयास करता है।

आधुनिक काल के उपन्यासों में जो नारी के स्वर दृष्टिगोचर होते है, वे उपन्यास साहित्य की लम्बी परंपरा में भी परिलक्षित होते है। प्रत्येक काल खण्ड में नारी को किसी न किसी रुप में प्रस्तुत किया गया है। प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी उपन्यासों में नारी के प्रति सुधारवादी दृष्टिकोण प्राप्त होता है। नारी के प्रति सुधारवादी दृष्टिकोण रखकर उपन्यास लिखने वालों में लाला श्रीनिवास, दास, पंडित बालकृष्ण भट्ट, अयोध्यासिंह, उपाध्याय किशोरीलाल गोस्वामी, लज्जाराम मेहता, राधाचरण गोस्वामी, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र प्रमुख है। इनके उपन्यासों में सुधारवादी दृष्टिकोण होने के फलस्वरूप नारी शिक्षा को महत्व देते विधवा विवाह, अनमेल विवाह एवं दहेज़ प्रथा जैसे गंभीर प्रश्नों के अपने उपन्यासों का विषय बनाया।

लाला श्रीनिवासदास कृत 'परीक्षा गुरु' में आदर्श एवं त्यागमयी नारी का चित्रण किया गया है। श्रध्दाराम फुल्लोरी कृत 'भाग्यवती' में नारी की पारिवारिक स्थिति, बाल-विवाह, अशिक्षा एवं शोषण का वर्णन किया गया है। ठाकुर जगमोहनसिंह के उपन्यास 'श्यामा स्वप्न' में प्रेम विवाह एवं नारी स्वतंत्रता किशोरीलाल गोस्वामी कृत नारी प्रेम पर केन्द्रित है। लज्जाराम मेहता के स्वतंत्र रमा ओर परतन्त्र लक्ष्मी उपन्यास में भारतीय नारी के पतिव्रत्य की महता सिद्ध की गई है। अयोध्यासिंह उपन्यास कृत 'प्रेमकांता' राधारानी हिन्दी का ठाठ एवं में भारतीय नारी के स्वरूप को चित्रित किया गया है।

जयशंकर प्रसाद के उपन्यास 'तितली' में विधवा जीवन की यातना, 'कंकाल' में तारा के सामाजिक उत्पीडन का यथार्थ चित्रण हुआ है।

राधिकारमण सिंह ने अपने उपन्यासों में मध्यवर्गीय विधवा नारी के जीवन के दुखद प्रसंगों की बड़ी मार्मिक विवेचना प्रस्तुत की है। उनके उपन्यास 'राम-रहिम' में बेला को विधवा जीवन की विषम परिस्थितियों का चित्रण किया गया है। डॉ.रामदरश मिश्र लिखते है कि - **"**विधवाओं के जीवन की विवशता की कोई सीमा नही है। उनकी दशा इधर कुँआं उधर खाई की है।**"116** सियाराम शरण गुप्त के उपन्यास में किशोरी का सामाजिक संदेह के कारण विवाह टूट जाता है और नारी में परित्यकता नारी के जीवन संघर्ष की कथा है। 'संगम','विराटा की पदमिनी','झांसी की रानी', 'मृगनयनी' आदि ऐतिहासिक उपन्यासों में नारी की वीरता, साहस एवं देश भक्ति का यथार्थ चित्रण मिलता है।

स्वातंत्र्योतर काल में नारी सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में भाग लेने लगी। भारतीय संविधान में भी नारी के लिए कई कानून बने। इस कालखंड में नारी जीवन में नवीन चेतना जाग्रत हुई एवं अपनी अस्मिता के प्रति सजग हुई। स्वातंत्र्योतर उपन्यासों में आधुनिक नारी के बदलते हुए दृष्टिकोण को अंकित किया गया है। कामकाजी तथा पारिवारिक स्तर पर नारी की विभिन्न समस्याओं एवं उसके साथ संघर्ष करने वाली नारी की मानसिकता का इन उपन्यासों में यथार्थ चित्रण किया गया है। डॉ.अमर ज्योति यशपाल के पात्रों के संदर्भ में लिखती है कि - **"**यशपाल के देशद्रोही उपन्यास के नारी पात्रों में काम संबंधों के उन्मुक्त रुप का प्रस्तुत किया गया है।**"117** इस काल खण्ड के उपन्यास की नारियाँ शोषण के विरोध में संघर्ष करती हुई दिखाई देती है।

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नारी का प्रवेश एवं उसका योगदान अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाता है। पुरुष लेखकों ने कल्पना के आधार पर नारी हृदय की भावनाओं को अभिव्यक्त किया है, किन्तु एक नारी, समाज की समस्याओं को जितना सूक्ष्म ढंग से प्रस्तुत कर सकती है

उतना पुरुष नही कर सकता। पुरुष उपन्यासकारों के समान ही नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व को सामने रखकर उपन्यास लिखने में महिला उपन्यासकारों का समान रुप से योगदान प्राप्त होता है।

(3.7.4) हिन्दी कहानी साहित्य में नारी

कहानी का रिश्ता मनुष्य जीवन से अती पुराना और गहरा है। प्राचीन काल से कहानी मनुष्य के मनोरंजन और अभिप्रेरणा का साधन रही है। आम जीवन से कहानी का सरोकार आधुनिक युग में विशेषत: दिखाई देता है। आधुनिक काल ने ही कहानी को लिखित रूप प्रदान किया। ज्यो-ज्यो मनुष्य का जीवन एवं क्षेत्र व्यापक होता गया, त्यों-त्यों कहानी भी अपने स्वरूप में विकसित होती गई। इसी विकसित पथ पर अग्रसर होती हुई कहानी आधुनिक काल की प्रमुख गध विधा के रुप में प्रतिष्ठित हो चुकी है।

कहानीकारों ने नारी के बंधनमुक्त रुप को ही कहानी का विषय बनाया है। नारी की एक यथार्थ सच्चाई जो कि उसका बंधन युक्त होना है जो कि समाज की नियति बन गई है। उस पर नारी-पुरुषों दोनों ने कहानी लिखी है, उमाशंकर चौधरी की कहानी सेक्सपियर क्या तुम उससे मिलना चाहोगे में यह प्रवृत्ति देखने को मिलती है। हम किस समय में जी रहे है। हम आधुनिकता के पता नही किस हवाई पंख पर बैठकर उड़ रहे है। यह कहानी हमारे समय पर एकदम क्रूर मज़ाक जैसी है। छोटी मामी विधवा है। छोटी मामी अब चौवालिस साल की है। शादी के साल ही वह विधवा हो गई थी। पति का चेहरा तक नही देखा था। इतने साल बाद मामा की एक फोटो उनकी तक किताब को झाडते वक्त गिरती है। मामी उस फोटो को पहचान तक नही पाती। पूँछने पर सुनने को मिलता है “बबनी मरल आदमी क फोटो नाय देखो। भगवान तोरा काला साया से

बचाय।"**118** कभी-कभी परंपराओं का निर्वाह करने के लिए अपनी जीवन के साथ समझौता की त्रासदी है इस समय के अनेक कहानीकारों ने अपनी कहानियों में दिखाया है।

प्रसिद्ध विद्वान डी.एच.लारेन्स के शब्दों में "औरत न मनोरंजन का साधन है और न पुरुष की वासना का शिकार। वह व्यक्ति की चाह की वस्तु नही, बल्कि वह तो पुरुष का दूसरा ध्रुव है। उसका अस्तित्व पुरुष का अनिवार्य पूरक है।"**119**

महिला कहानीकारों ने ही नही पुरुष कहानीकारों ने भी पत्नी के बदलते स्वरूप को चित्रित किया है। इस दृष्टि से कमलेश्वर की 'बयान','तीन दिन पहले की रात', कृष्ण बलदेव वैद की 'त्रिकोण','एक कमजोर लड़की की कहानी' महत्वपूर्ण है।

'एक कमजोर लड़की की कहानी' की नायिका सविता पति से यहाँ तक कह देती है "जो उसके और उसके प्रेमी के मध्य था वह हमारे और तुम्हारे बीच नही है।"**120** 'देवी की मां',और 'ट्यूमर' आदि कहानियों का भी यही स्वर है। कहानीकार शिवप्रसाद सिंह ने अपनी कहानी में ग्रामीण नारी के सशक्तिकरण का प्रयास किया है। उन्होंने ग्रामीण अनपढ़, घरेलू नारी को लेखनी का विषय बनाया है।

आधुनिक महिला कहानीकारों ने भी अपनी लेखनी के द्वारा नारी को जागृत करने और उसे अपने अधिकारों के प्रति सजग रहने की आवाज़ उठाई है। किसी भी लेखक की सबसे बड़ी चिन्ता आधुनिक समाज में मूल्यों के हास्य और अमानवीयता को बढ़ाने वाली परिस्थितियों के प्रति होती है जिसे लेखक मानव जीवन में धारित होते देखता और अनुभव करता है।

इस तरह कहानी में ढेर सारी लेखिकाओं ने जिन्होंने अपनी कहानियों में नारी-मुक्ति के प्रश्न को उठाया है कहानी लेखकों ने भी अपनी लेखनी से नारी स्वातंत्र्य की पक्षधरता को मुखर अंदाज़ दिया है, इसलिए यह कहने में हीचक और संकोच नही है कि परंपरा या रुढिवादिता का बोलबाला होने के बावजूद भी आज की कहानी का चरित्र नारी स्वातंत्र्य चहारदीवारी से मुक्ति की हकीक़त, आकाश में उड़ने के लिए मुक्त स्थान को अपने में समाहित और प्रखर तरीके से अपनी उपस्थिति दर्ज करेंगे।

(3.7.5) अन्य हिन्दी साहित्य में नारी

लेखकों ने गध साहित्य की गौण तथा नवप्रवर्तित विधाओं को अंकुरित और पल्लवित करने में भी यर्थष्ट योगदान किया। आलोच्य युग के पूर्व हिन्दी में जीवनी यात्रावृत, संस्मरण और पत्र-लेखन की परम्परा तो विधमान थी, किन्तु आत्मकथा, रेखाचित्र, गधकाव्य तथा अभिनन्दन एवं स्मृति-ग्रंथों की रचना प्रथम बार छायावाद युग में ही है। गध-शैली के विकास के साथ-साथ अभिव्यक्ति के इन नये रुपों की खोज सर्वथा स्वाभाविक थी।

रेखाचित्र

महिला साहित्यकारों ने रेखाचित्र के विकास में प्रसिद्धि देने में प्रमुख भूमिका निभायी है। जिसमें महादेवी वर्मा, कुंतल गोपाल, पद्मिनी मेनन, कृष्णा सोबती, कुरंगी बहन देसाई आदि प्रमुख है।

हिन्दी साहित्य के संस्मरणात्मक रेखाचित्र साहित्य की श्रीवृद्धि में महादेवी वर्मा ने अत्यधिक योगदान दिया है। 'अतीत के चलचित्र','स्मृति की रेखाएँ','पथ के साथी','स्मारिका और मेरा परिवार' उनके उल्लेखनीय रेखाचित्र संग्रह है। अपने संपर्क में आए शोषित व्यक्तियों दीन-हीन

नारियों साहित्यकारों, जीवजंतुओं आदि का संवेदनात्मक चित्रण उन्होंने बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है। उनके रेखाचित्रो में चित्रमयता का अनायास समाविष्ट हो गया है।

आगे चलकर कुंतल गोपाल के 'कुछ रेखाएँ कुछ चित्र', पद्मिनी मेनन के 'चाँद', कृष्णा सोबती के 'हम हसमत' आदि रेखाचित्र को भी बहुत प्रसिद्धि मिली है। अनूदित रेखाचित्र में कुरंगी बहन देसाई को 'बा मेरी माँ','मनु बहन' आदि गांधी जी कृत गुजराती रचना का हिन्दी अनुवाद है, जो हिन्दी के श्रेष्ठ रेखाचित्रों में भी गिने जाते है।

आलोचना

आलोचना साहित्य सभी गध विधाओं में अपना विशेष स्थान रखता है। इसकी विषयवस्तु अन्य साहित्य विधा ही है। आलोचना साहित्य में भी महिला आलोचकों का स्थान विशेष है। इस में महादेवी वर्मा का नाम आगे आता है। उन्होंने अपनी प्रकाशित पुस्तकों की भूमिका में जो आलोचनात्मक लेख लिखे है वे किसी अन्य आलोचक के लेख से कम नही है। उसमें साहित्यिक विधा की समीक्षा के साथ-साथ शैली की निपुणता के कारण पाठक के हृदय को स्पर्श कर जाते है। आगे चलकर डॉ.निर्मला जैन ने इस कार्य को संभाला। उनकी रस सिद्धांत और सौदर्य शास्त्र एक सिद्धांतपरक आलोचना है। साठोत्तरी युग में जन्मी अनेक महिला आलोचक इन कार्य में कर्मरत है।

जीवनी

जीवनी में महिला साहित्यकारों में यशोदादेवी, मनोरमा बाई, मिलखा सिंह आदि है। यशोदादेवी ने आदर्श महिलाएँ, मनोरमा बाई ने विधोतम लिखी। बाकी साहित्यकार ने विदेशी लेखकों की जीवनी का अनुवाद कर प्रसिद्धि लाभ की, जिसमें महिला लेखकों ने अपना स्थान

कायम रखा। अबला दुर्बला कही जाने वाली भारतीय महिला ने सामाजिक आर्थिक दृष्टि से उपेक्षित होकर भी कभी हार नही मानी। स्वतंत्रता से पहले संग्राम में हो या राजनीति कभी भी वह पुरुषों के पीछे नही रही। कदम से कदम मिलाकर कंधे से कंधा मिलाकर चली है।

जीवनी में लोकप्रिय नेताओं, संत-महात्माओं, साहित्यकारों, विदेशी महापुरुषों, वैज्ञानिकों, खिलाड़ियों, उधोगपतियों आदि से संबंधित जीवनियां प्रचुर परिणाम में लिखी गई।

आत्मकथा

जीवन साहित्य के समान इस युग में आत्मकथा-लेखन की प्रवृत्ति भी पर्याप्त बलवती रही है। साहित्यिक सामाजिक, राजनीतिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्तियों ने अपनी आत्मकथाएं लिखकर इस विधा की समुद्र किया। आधुनिक काल के पहले तीन कालखंण्डों की तुलना में इस कालखंड में साहित्यकारों की आत्मकथाएँ अधिक संख्या में प्रकाशित हुई। कविय, कथाकारों, आलोचकों आदि सभी ने अपनी-आत्मकथाएँ लिखी।

जानकीदेवी बजाज कृत 'मेरी जीवन यात्रा' इस अर्थ में विशिष्ट है कि वे पहली महिला है जिनकी आत्मकथा हिन्दी में प्रकाशित हुई है। इसमें लेखिका ने अपने बचपन से लेकर पति की मृत्यु तक के जीवन की घटनाओं को निबद्व किया है। इस आत्मकथा के संबंध में यह जानना भी ज़रुरी है कि लेखिका ने इसे अपने हाथ से न लिखकर रिषभदास रांका की बोलकर लिखाया है। फिर यह आत्मकथा स्वयं उनके पति, महात्मा गांधी एवं अन्य अनेक व्यक्तियों के हाथों के हाथों सजी - संवरी है।

पत्र-पत्रिकाएँ

साहित्य के इतिहास में पत्र-पत्रिकाओं का विशेष महत्व होता है। साहित्य की नयी प्रवृतियाँ, उसमें होनेवाले प्रयोग और नूतन दृष्टिकोण सर्वप्रथम पत्रिकाओं के माध्यम से ही अभिव्यक्ति पाते है। समीक्ष्य काल में विविध प्रकार की पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती रही, जिनसे पाठकों की अभिरुचि को समझने में सहायता मिलती है। मासिक पत्रिकाओं में सरस्वती, मर्यादा और स्त्री-दर्पण का तो पहले की भ्रांति प्रकाशन होता रहा तथा चाँद, प्रभा, माधुरी, सुधा, विशाल भारत, हंस आदि भी परिगणनीय पत्रिकाएँ है। रामेश्वरी नेहरू के सम्पादकत्य में प्रकाशित होनेवाली पत्रिका 'स्त्री-दर्पण' (प्रयोग) में नारी समस्याओं पर लेखादि के अतिरिक्त महिलाओं की रचनाओं को प्राथमिकता प्राप्त रहती थी।

चाँद (प्रयोग) का प्रकाशन आरम्भ में 1920 ई. में साप्ताहिक पत्र के रुप में हुआ था, किन्तु 1923 ई. से रामरख सहगल और चण्डीप्रसाद हदपेश के सम्पादक में इसका प्रकाशन मासिक पत्रिका के रुप में हुआ। इसमें नारी विषयक समस्याओं तथा लेखिकाओं को प्राथमिकता मिलती थी।

निबंध

निबंधों का सम्बन्ध पत्र-पत्रिकाओं से सीधे जुड़ा हुआ था। लेखकों के सामने अनन्त विषय थे। राजनीति, समाज-सुधार, धर्म अध्यात्म, आर्थिक दुर्दशा, अतीत का गौरव, महापुरुषों की जीवनियां आदि विषयों पर विचार प्रकट करते है। लेखकों ने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से निबंध साहित्य को खूब समुद्र किया। प्रमुख निबन्धकार थे - भारतेन्दु, हरिश्चंद्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बद्रीनारायण, चौधरी प्रेमधन लाला श्रीनिवासदास, राधाचरण गोस्वामी, काशीनाथ खत्री।

पुरातत्व, इतिहास, धर्म ,कला, समाज-सुधार, जीवनी, यात्रा-वृतान्त, भाषा साहित्य आदि में व्यंग्य शैली का अदभुत आकर्षण विधमान है। उनके यात्रा-वृतान्त और ऋतुवर्णन संम्बधी निबंध अधिक सजीव है। बालकृष्ण भट्ट भारतेन्दु युग के सर्वाधिक समर्थ निबंधकार है। उन्होंने सामायिक समस्याओं पर जमकर लिखा है। बाल विवाह, स्त्रियां और उनकी शिक्षा, राजा और प्रजा, देश-सेवा महत्व, महिला स्वातन्त्र्य आदि निबंध इसी प्रकार के है।

(3.7.6) प्रवासी महिला कथाकारों के साहित्य में नारी

नारी माता है, पत्नी है, दासी है। नारी करुणा है, ममता है, भोग्या है। नारी हौवा है, कुदरत है, लानत है। नारी रोशनी है, भावना है, बेबसी है। नारी सिसला जीवन की साधना है। अपने लिए किस्मत है और नर के लिए बस एक थाली है।

नारी लेखन में नयी भाषा, नया दृष्टिकोण नजर आ रहा है। विश्व में नारी लेखिकाओं ने 20 वी सदी में अपना एक इतिहास रचा है। 20 वी सदी में हिन्दी में महादेवी वर्मा और सुभद्रा कुमारी चौहान के नाम साहित्यिक फलक पर आए। महादेवी वर्मा जी का इस साहित्यिक धरातल पर प्रवेश कोई कम बड़ी बात नही है। महादेवी वर्मा जी जब ये लिखती है कि - **"**मैं नीर भरी दु:ख की बदली, कल उमडी थी मिट आज चली।**"121** तो वे नारी अस्मिता के लिए ही कलपती है। सुभद्रा कुमारी चौहान ने लिखा है कि **"**बुंदेले हरबोलों के मुह हमने सुनी कहानी थी, खूब लड़ी मरदानी वह तो झांसी वाली रानी थी।**"122** उर्दू की लेखिका मोहिनी, नीलिमा आदि हिन्दी साहित्य फलक पर आ गई। उर्दू की लेखिका इस्मत चुगताई अपनी बोल्ड यथार्थ परक रचनाओं के माध्यम से हिन्दी जगत में भी छाई नही। उन्होंने स्त्रियों की यौन समस्याओं पर लिखा है। गध में

कृष्णा सोबती ने 'मित्रों मरजानी','यारों के यार' लिखकर हिन्दी जगत में तहलका मचा दिया। ये स्त्री लेखिकाएँ अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का उपयोग करने लगी थी।

जिस देश के साहित्य का समाज प्रतिमान पितृक लिंग भेद पर आधारित हो वहां स्त्री लेखन कलाकर्म कितना निर्भीक अथवा साहसिक रह सकता है। नारियाँ अब नारी जाति के लिए न्याय के संघर्ष को तीखा बना रही है। स्त्री की अस्मिता के प्रश्न को लेकर अब स्त्री लेखन में ज़बरदस्त संघर्ष छिड़ा हुआ है। पहले लेखिकाएँ स्त्री की जो पारंपरिक दीनहीन छवि प्रस्तुत करती थी, अब स्त्री-विमर्श ने उस पारंपरिक स्थिति को बदल दिया है।

"ऐसी ही कुछ महिला कथाकार विदेशो में साहित्य रच रही है, जिन्हें हम प्रवासी साहित्य मानते है।**"123**

कमलेश चौहान अपने उपन्यास 'सात समुन्दर पार' में यह स्पष्ट कर देती है कि आज का भारत समृद्ध भारत देश बन चुका है परन्तु फिर भी लोगों के दिलो में विदेश जाकर पैसा कमाने की इच्छा जैसी की तैसी ही बनी हुई है यहां तक कि भारत के लोग आज भी अपनी कन्याओं का विवाह विदेश में करने के लिए लालायित रहते है। भारतीय और पश्चिमी संस्कृतियों में ज़मीन आसमान का अन्तर है। भारत से विदेश गये लोग न तो पूरी तरह से भारतीय संस्कृति को भूल पाते है और न ही पाश्चात्य संस्कृति को पूरी तरह अपना पाते है। फलस्वरूप ऐसे लोगों को जीवन में समस्याओं का सामना अपेक्षाकृत ज्यादा करना पड़ता है। इस उपन्यास में तीन पीढ़ियों की कहानी को बयान किया गया है। पहली पीढ़ी 1987 के दशक की है, दूसरी पीढ़ी 1997 के दशक के बाद की है और तीसरी आधुनिक पीढ़ी है।

इस प्रकार यह उपन्यास जहां भारतीय नारी के प्रेम, संस्कृति और मानवीयता के उच्च आदर्श को प्रस्तुत करता है, साथ ही साथ विदेश में जाकर अनेक प्रकार की समस्याओं का सामना करती महिलाओं की समस्याओं से जूझने का हौसला प्रदान करता हुआ उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरुक भी बनता है। एक अकेली औरत किस प्रकार अपने बच्चों का भलीभाँति पालन-पोषण कर उन्हें समाज से बचाकर उनका सही मार्गदर्शन करती है। अत:यह उपन्यास सात समुन्दर पार की धरती के जीवन की तथा नारी की सही तस्वीर हमारे सामने प्रस्तुत करता है।

अंत में यह कहना गलत न होगा की 21 वीं सदी में नारी की भूमिका अधिक चुनौतीपूर्ण हो गई है। बढ़ते हिंसा, आतंकवाद, लूटमार, अश्लीलता ने नारी जीवन असुरक्षित बना दिया है। उपभोकतावादी संस्कृति एवं पश्चिमी अंधानुकरण एवं उदारीकरण ने नारी को भोग की वस्तु के रुप में प्रचारित किया है। नारी गरिमा सम्मान को आहत किया है। सम्मानीय रुप का गौरव खण्डिंत किया है। नारी को यह फैसला स्वयं करना है, कि वह सम्मान के साथ तरक्की करना चाहती है अथवा नहीं। उसे हर समय यह ध्यान रहना चाहिए कि प्रतिष्ठा प्रथम है, पैसा बाद में। आज नारी की सोच में परिवर्तन आया है, किन्तु उसे यह सोचकर चलना चाहिए कि अपने गिराकर आत्मा को मारकर वह सब कुछ पा भी जाती है तो निरर्थक है।

(3.7.7) महिला कथाकारों की दृष्टि में नारी

1947 में जब भारत स्वतंत्र हुआ तो स्वतंत्रता के साथ मिले देश-विभाजन, शरणार्थी समस्या, बेरोज़गारी, आवास एवं खाधान्न का संकट आदि अनेक समस्याओं से देश त्रस्त एवं अस्त-व्यस्त हो उठा। राजनीतिक एवं सामाजिक उथल-पुथल और पुन:स्थापन के इस दौर में

बहुत से मूल्य एवं मान्यताएं बदलों, नए परिदृश्य खुले, जीवन-दृष्टि एवं सोच में नए आयाम जुड़े जिन्होंने जन-जीवन और इसी बहाने साहित्य को भी गहरे प्रभावित किया।

महिलाओं ने जीवन और समाज के अन्याय क्षेत्रों में अपनी भूमिका और भागीदारी की समझ कर आगे बढ़ने की राह चुनी। अन्य अनेक भूमिकाओं के साथ-साथ साहित्य सृजन के दृष्टि से महिला लेखन साहित्य क्षितिज पर उभर कर उदित हुआ। परिणामत: नारी कथा लेखिकाओं जिनमें शांति मेहरोत्रा, शांति जोशी, सोमावीरा, विमल रैना, मन्नू भंडारी, उषा प्रियवंदा, कृष्णा सोबती, मालती जोशी, राजी सेठ, सुधा अरोड़ा, ममता कालिया, सुनीता जैन, सिम्मी हर्षिता, मैत्रेयी पुष्पा, मधु संधु इत्यादि के साथ-साथ युवा पीढ़ी की कथा लेखिकाओं मनीषा कुलश्रेष्ठ, पांखुरी सिन्हा, अनामिका कितने ही गिने-अनगिने नामो की एक अनवरत् श्रृंखला बनती चली गई। इन सभी रचनाकारों ने अपनी कथा कृतियों से हिन्दी भारती की श्री वृध्दि की और निरन्तर क्रियाशील है।

अब आधुनिकाएं विवाह संस्था को नकार कर अविवाहित रहने का निर्णय ले सकती है। प्रेम संदर्भो में भी रुढ़ि या आदर्श का ढोंग न करके स्वच्छंद व मुझ प्रेम संबंधों का आश्रय ले सकती है। विवाहिताओं में भी विवाह पूर्व या विवाहेत्तर संम्बधों में एक स्वच्छंद एवं उन्मुक्त दृष्टि का प्रचलन देखने को मिलता है।

नारी की इस सोच को बल मिला उसकी आर्थिक आत्मनिर्भरता से। आधुनिक शिक्षा, सोच एवं स्वतंत्रता के प्रभाव स्वरूप महिलाओं ने आर्थिक आत्मनिर्भरता का मार्ग अपनाया। युगों तक आर्थिक पराक्षयता के कारण नारी पुरुषाश्रिता एवं परतंत्र रही परन्तु आधुनिक युग में उसने

अनेक कारणों की विवशता से या फिर स्वेच्छा से अर्जिका की भूमिका अपनाई।

आज की नारी अर्थ क्षेत्र एवं घर के अंदर की भूमिकाओं का निर्वाह करते हुए पहचान के लिए भी जूझ रही है। पारंपारिक पारिवारिक या कामकाजी नारी की छवि से परे वह अपनी निजता की एक स्वतंत्रता पहचान बनाने के लिए संघर्षरत है। वैसे भी जीवन का कौन सा क्षेत्र है जहाँ नारी पुरुष के कंधे से कंधा जोड़ कर खड़ी न हो सके। तो फिर स्वतंत्र व्यक्ति के रुप में अपनी अस्तित्व स्थापना का अधिकार और अवसर उसे अवश्य मिलना चाहिए। केवल किसी की आश्रिता या छाया बनकर जीने की स्थिति उसे उद्विग्न करती है और विद्रोही मुद्दा में ला खड़ा करती है। यथा " ..... मेरे कलाकार को अभिव्यक्ति नही मिलती तो मैं बेचैन हो जाती हूँ।"**124** खामोशी को पीते हुए (निरुपमा सेवती) या फिर " ..... वह जमाने गए जब महिलाएँ चुपचाप बैठी करती थी..... **"125** दर्द का इन्तज़ार (अंचिता अग्रवाल)

अस्तित्व स्थापना को लेकर आज महिलाओं को धर के अंदर और बाहर दोनों मोर्चों पर जूझना पड़ता है। पारंपरिक पुरुष सतात्मक प्रभावों से मुक्त होने के लिए आतुर नारी को पर्याप्त विरोध सहना पड़ा है और आज भी यह लड़ाई खत्म नहीं हुई है। और हिन्दी विपरित परिस्थितियों से उपजी है परित्यक्याओं तथा तलाक़शुदा स्त्रियों की समस्या। पुरुषों के मुकाबले दोयम दर्जा मिलने की कटुता से नारियों में मूल्यों एवं आदर्शों के प्रति अनास्था का स्वर उभरने यौन उन्मुक्तता के प्रति आग्रह बढ़ने से यौन शुचिता व पतिव्रत्य जैसे मान मूल्य बिखरे बदले है। नारी की इस बदली हुई एप्रोच के कारण न नारी संबंधों में उदभूत बिखराव व अहं के टकराव से समाज में परित्यक्ताओं तथा तलाक़शुदा महिलाओं का बाहुल्य लक्षित किया जा रहा है। जिसका प्रभाव मूल्य हास्य, परिवार विघटन,

रिश्तों में तनाव, सम्बन्ध विच्छेद आदि की यंत्रणा के रुप में कथा-साहित्य में देखा जा सकता है। वस्तुत: नारी कथा लेखन ने नारी की बहुआयामी भूमिका, विविधमुखी, व्यक्तित्व एवं अस्मिता की लड़ाई से उदभूत विडंबनाओं की शत-शत छवियाँ उदभासित हो रही है।

अत:हिन्दी साहित्य में महिला कथा लेखन की एक अजस्र धारा प्रवाहमान है, जो उतरोतर सम्पन्न एवं समृद्ध हुई है। मेरी निजी सीमाएं है - किन्तु उपलब्ध नारी कथा साहित्य का यतकिंचित अध्ययन करने के बाद घोषित कर सकती है कि नारी तथा नारी जीवन से सम्बद्ध स्थितियों व प्रसंगों का, समस्याओं व संदर्भो का, भावनाओं व संवेदनाओं का, बदलावों व विसंगतियों का, उपलब्धियों व सीमाओं का नारी लेखिकाओं ने अत्यंत सूक्ष्म एवं सटीक, सार्थक एवं यथार्थ प्रामाणिक तथा कलात्मक अंकन किया है।

3.8 महीप सिंह की कहानियों में नारी के परिपेक्ष में उनके विचार

आज का व्यक्ति कितनी ही एकांगी मन:स्थितियों में रहकर जी रहा है और एक उलझा व्यक्ति अपने संघर्षों में से जूझते हुए कभी हताश होकर घबराकर चीरव उठता है तो कभी फूट-फूटकर रोने लगता है कभी शराब का सहारा लेता है या कभी आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो जाता है। लेकिन आज के व्यक्ति के लिए इस आधुनिकता के बोझ की ढ़ोना एक मजबूरी बन गई है और उसे इस अशान्ति व तनाव को झेलना ही पड़ेगा। लेकिन इसमें सक्रिय होकर जीना ही सचेतन दृष्टि है। महीप सिंह की कहानियों कहानियों उन्हें किसी निश्चित विचारधारा के दायरे में बंधे हुए लेखक तक सीमित नहीं करती, अपितु आधुनिकता बोध का लेखक सिद्ध करती है। उनकी कहानियों में व्यक्ति अपने अस्तित्व को पूर्वनियोजित बंधनों में बंधा पाता है और उसी में छटपटाता है।

आधुनिकता एवं औधोगिक विकास के प्रभाव में आए व्यक्ति चाहे वे पुरुष हो या नारी, इसी नियति को जीने की अभिशात है।

"महीप सिंह के नारी पात्र समस्त तनावों में जीकर उन्हें झेलते हुए, उसे जानने का प्रयत्न करते हुए सहज होने के रास्तें तलाशते है और सकारात्मक दृष्टि को ध्वनित करते है।"**126**

हमारे समाज में आज की नारी की स्थिति में बहोत सारा सुधार आया है, परन्तु फिर भी वह पूजनीय नही बन पाई है। तथापि शिक्षित वर्ग में नारी अब पुरुष के समक्ष खड़ा होकर तैतीस प्रतिशत आरक्षण चाहती है। लेकिन स्टेटस और उपयोगिता की खोज में उसके व्यक्तित्व का विखण्डन ही हुआ है। पारिवारिक संबंधों में भी पहले जैसी ऊष्मा बरकरार नही रही। माता-पिता, भाई-बहन के संबंधों अब आत्मीयता से वंचित हो रहे है। सबसे अधिक पति-पत्नी के संबंधों में आया है।

महीप सिंह की कहानियों के पात्र में अधिकांशत: नारी जीवन को जीने के साथ-साथ जानने में भी रत दिखाई देती है। वह आज के जीवन की तमाम समस्याओं से घिरे हुए है, नसों को तड़का देने वाले तनाव में भी गुज़र रही है। निराशा और हताशा उन्हें जड़ बना देने की हद तक ले जाती है लेकिन वह इससे बाहर निकलने का प्रयास करना नहीं छोड़ती है। नारी जीवन से भागने की कोशिश नहीं करती बल्कि जीवन की ओर भागती है। वे तीव्र गति से जीवन पद्धति में आते परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाली असहज स्थितियों में सहज होने का प्रयत्न करती दिखाई देती है।

शिक्षा के प्रसार के कारण नारी अपनी अस्मिता के प्रति सचेत हो उठी है। आर्थिक रूप से स्वावलम्बी और बौध्दिक रुप से अत्यंत जागरुक यह नारी अब पुरुष वर्चस्व को उस तरह सिर झुकाकर स्वीकार करने को

तैयार नहीं है, जिस तरह अब तक करती आई है। फलत: परिवार टूट रहे है और जो नही टूट रहे हैं उनमें भी अब सत्ता समीकरण काफी कुछ बदल रहें है, बदल गए है।

नारी जब काम करने बाहर निकलती है तो उसके सम्पर्को का दायरा विस्तृत होता है और उस दायरे में कहीं प्रेम या रोमांस भी आ जुड़ता है। इन प्रेम संबंधों की परिणति अविवार्यत: विवाह में नहीं होती। ये संबंध बहुत बार विवाहेत्तर भी होते है। इन संबंधों में जीना इनके टूटने का दर्द झेलना और इनका किसी भी परिभाषित परिणति तक न पहुंच पाना आज के जीवन का अंग बन गया है महीप सिंह की कहानियों के पात्रों को हम अनेकशः इन स्थितियों में छटपटाते और इनमें सहज होने का यत्न करते देखते है।

महीप सिंह की कहानियों की गृहिणी अधिकांशतः भारतीय नारी का परम्परागत चित्र प्रस्तुत करती है। इनकी कहानियों के पुरुष मात्र बेजिम्मेदार और दुर्लब्ताओं से ग्रस्त है, जबकि महिला पात्र विपरित परिस्थितियों के बीच अलग रास्ता चुनती हुई सबल और जिम्मेदार मालूम होती है। साथ ही साथ शिक्षा के प्रसार से नारी ने अपनी अस्मिता को पहचाना है। वह अब पहले जैसी नहीं रह सकती। महीप सिंह की कहानियों में नारी एवं स्व के प्रति जागृत होती दिखाई देती है।

नारी-पुरुष संम्बधों में सामंजस्य या संतुलन ढूंढने की कोशिश की गई तथा स्त्री-प्रकृति की सामाजिकता और वैयक्तिकता दोनों की तरफ ध्यान दिया गया। महीप सिंह की कहानियों में नारी पात्र सामाजिक संम्बधों को अधिक से अधिक तरजीह देते है। इसीलिए तो 'ठंडक' की सत्य को एयरकंडीशन होल में भी ठंडक नही पहुंचती, क्योंकि वह इस बात से परेशान है कि पड़ोसी का बच्चा घर से भाग गया है। यह कहानी

में शांति अपने पड़ोसी की तीमारदारी में इतनी व्यस्त हो गई है कि अपने पति का ध्यान रखना भी भूल गई है। जबकि इन कहानियों के पुरुष पात्र ठीक इनके विपरीत गैर सामाजिक रुप में चित्रित हुए है। महीप सिंह के नारी पात्रों ने मानो दूसरों के सुख में आत्मसुख पा लिया है। कहानी के कुछ पात्र ऐसे भी है जो सामाजिकता के बोझ तले दबे रहकर जीते है, जैसे 'कटाव' कहानी की शीला जो संयुक्त परिवार, बेमेल पति, अनचाहे जीवन और यातनामय परिवेश के साथ तालमेल पैदा करने की लगातार कोशिश कर रही है और छटपटाहट झेलते - झेलते ऐसा लगता है कि वह टूट जाएगी या मर जाएगी।

महीप सिंह की सचेतन सोच के वाहक नारी पात्र स्व को तलाश करते हुए विसंगतियों, विडंबनाओं और शोषण को झेलते अपने सामाजिक दायित्व निभाते हुए व्यावहारिकता को अपनाकर मुक्ति का मार्ग खोजते है। इस सम्बन्ध में महीप सिंह ने स्वयं भी लिखा है - **"**आज स्थिति टूटी हुई आस्थाओं से पीड़ित होने,चौंकने या निर्लिप्त होकर उसे देखने की नही है, बल्कि उन्हें साहसपूर्वक स्वीकार ने और उनमें सहज होने की है।**"127** महीप सिंह के नारी पात्र स्थितियों से पलायन नहीं करते अपितु स्थितियों से एडजस्टमेंट बिठाते है। उनके नारी पात्र अपने विवेक से निर्णय करना चाहते है- चाहे इसके आड़े स्त्री-पुरुष के संम्बधों का अहं आए, उनकी शिक्षा, उनका आत्मनिर्भर होना आए अथवा यौन कुंठाएं। वे हताशा से जूझते है।

महीप सिंह की कहानियों अधिकतर शहरी मध्यमवर्गीय परिवारों से आए नारी पात्रों की कहानियाँ है। उनके नारी पात्र शिक्षित व आत्मनिर्भर है। कामकाजी स्त्रियाँ कार्यालय के भीतर और बाहर पुरुषों से सम्बन्ध स्थापित करती हैं, लेकिन उन रिश्तों को कोई नाम नही दे पाती। अधिकतर प्रेम प्रसंगों में धोखा भी खाती है। लेकिन परिस्थितियों से

जूझकर संघर्षशील जीवन बिताने में ही जीवन की सफलता मानती है, जैसे 'धूप की उंगलियों के निशान' की नीता। ये आधुनिक पात्र कही परिवेश से तो कही अपने आप से लड़ाई लड़ रहे है। वे कही संघर्ष करते है तो कही समझौते की जिन्दगी जीने के लिए विवश है।

नारी पात्रों को देखने पर लगता है कि ये व्यक्तित्व की खोज में एक अनियोजित दौड़ दौड़े चली जा रही है। महीप सिंह के नारी पात्र अपने भीतरी संस्कार से तो प्रभावित है ही, उन्हें बाहरी परिवेश भी काफी दूर तक संचालित करता है। आधुनिकता की दौड़ में व्यक्ति अपनों के बीच ही कटा-कटा सा रहता है। इसका सफल उदाहरण प्रस्तुत करती है एकांगी सोच की वाहक मिसेज मेहता जो अपनी सोच के कारण ही समाज से अलग-अलग पड गई है।

महीप सिंह की कहानियों में मानवीय संम्बधों और उनके विघटन टूटते संम्बधों की चर्चा अनेक स्थानों पर हुई है। लेकिन फिर भी नारी पात्रों का निराशा या कुंठा के विरुद्ध सक्रिय रहना महीप सिंह की सचेतन कहानियों का मूलाधार है।

मानवीय करुणा की सकारात्मकता दर्शाती कहानी 'लय' जिसमें विधवा नारी मित्र की सहायता करते देख पत्नी पहले तो ईर्ष्या करती है लेकिन जब खूद किसी की सहायता करती है तो वह सहज हो उठती है। सहज मानवीय संम्बधों का स्वस्थ रुप व्यक्त करती कहानी हैं 'विगत का डर' जिसमें एक युवती के मन में भय की भावना है, पुरुष के प्रति। लेकिन शीघ्र ही वह उन्मुक्त मन से हँसने - बतियाने लगती है।

कामकाजी नारी होने के कारण दफ्तर के पुरुष सहयोगी से उसके सम्बन्ध बन जाते है। लेकिन वह सम्बन्ध को नाम नही दें पाती और अपने परिवार को छोड़ भी नही पाती। वह एक अतृप्त जीवन जीने के

लिए विवश है। महीप सिंह की कामकाजी स्त्री टैक्टफुल भी है। वह अपना काम निकालना बखूबी जानती है। आज की नारी अपनी पहचान खुद बनाना चाहती है, तभी तो उसे पति या पति का सरनेम लेना स्वीकार नही। सारे संम्बधों को बनाए रखते हुए भी वह अपनी एक अलग पहचान बनाए रखना चाहती है।

महीप सिंह के कुछ नारी पात्रों में एक विशेष तरह का दर्द छिपा रहता है, जैसे की 'धूप की उंगलियों के निशान' की नीता। वह पति-पत्नी के बोझ को आजीवन ढोने के लिए कटिबद्ध नही रहती। लेकिन पुराने टूटे रिश्ते को दुश्मनी की दृष्टि से भी नही देखती। महीप सिंह के नारी पात्र दिमागदार प्रतीत है। वह पति से अपने गुजारे के लिए भीख नही चाहती अपितु स्वाभिमान से अपनी गुजर-बसर करने में विश्वास करती है। लेकिन दूसरी तरफ संतोष जैसे नारी पात्र हैं जिनकी अपनी निजी इच्छा-अनिच्छा कोई नही। बस है तो पति के प्रति पूर्ण समर्पण। इस प्रकार महीप सिंह ने स्त्रियों के व्यवहार का तुलनात्मक चित्रण प्रस्तुत किया है।

नारी का हर रुप को चित्रित करना महीप सिंह का मानो उद्देश्य है। कुछ नारी पात्रों में 'स्व' की भावना इस तरह भरी है कि उन्हें लगता है कि रिश्ते नाम की कोई चीज नही होती। ये बनते-बिगड़ते रहते है। उन्हें लगता हैं की स्व की तृप्ति के लिए उसीको ज़िन्दा रखने के लिए संसार में सभी काम किए जाते है। दुनिया में हर रिश्ते को आज नारी अपनी जगह पर रखना चाहती है। उसे आवश्यकता से अधिक भाव देना नही चाहती। आज की नारी चाहती है उसके बच्चे उसके पल्लू में न बंधे रहे, वे स्वतंत्र होकर अपने निर्णय स्वयं करें, अपना जीवन साथी स्वयं चुने, कमाएं व शादी के बाद माँ-बाप से अलग रहे।

महीप सिंह के नारी पात्रों में परंपरागत गृहिणी का भी चित्रण हुआ है। उसमें पूरी तरह से सामाजिकता के गुण भरे है। वह आत्मकेंद्रित नही है। पति के काम में पूरा सहयोग देती है। पति के काम के लिए अपना पूरा समय निकालती है, सामाजिक रिश्तों को बखूबी निभाती है। पति द्वारा अपने सारे काम व घर-गृहस्थी के काम उस पर छोड़ देना उसको अपनी सार्थकता की अनुभूति देता है। लेकिन पति द्वारा उसके काम को महत्व देना उसे उद्विग्न कर देता है। (उलझन)

सड़क दुर्घटनाओं की कल्पना कर उसका मन कांप उठता है, वह पति के संकुशल घर लौटने की कामना करती है। सामान्य तौर पर पति के साथ मधुरता से पेश आने वाली नारी को जब पता चलता है कि उसका पति किसी अन्य नारी के साथ सम्बन्ध रखने लगा है तो वह कटु हो जाती है। इसी कटुता और तनाव के दौरान कभी तो वह हिस्टीरिया की शिकार हो जाती है और कभी खीझ के दौरों से ग्रस्त हो जाती है। 'झूठ' और 'लय' कहानियों इसके उदाहरण है।

अकेलेपन के संत्रास से जूझती नारी की कहानी है 'कल' जिसमें सवी मन ही मन अपने अकेलेपन से लड़ती कल्पना करती है कि चारों और खून बिखरा पड़ा है और एक लाश पलंग पर पड़ी है। कल अखबार में खबर छपेगी डिफेंस कालोनी में वृद्धा की निर्मल हत्या। साथ ही साथ वह कहानी नारी के उस मातृत्व को भी चित्रित करती है, जहाँ बच्चे पढ़-लिखकर विदेशों में व्यवस्थित हो जाते हैं और यहाँ छोड़ जाते है बड़े-बड़े बंगलों में बूढ़े माँ-बाप को नौकरों के सहारे, निरंतर प्रतीक्षा में जीने के लिए बच्चों को देखने की लालसा लिए हुए।

महीप सिंह का एक नारी पात्र अपने आप में बहुत ही जटिल है, जिसका विश्लेषण करना मैं यहाँ बहुत ज़रुरी समझता है। वह है 'मैडम'

कहानी की नायिका जो बहुत ही रहस्यमयी एवं विचित्र पात्र है। वास्तव में उसका बचपन पिता या भाई के संरक्षण एवं स्नेह के अभाव में बीता है। इसलिए वह किसी पुरुष के सानिध्य को पाने की चेष्टा में रहती है लेकिन वह वेश्या की बेटी है, इसलिए कोई उसको भाई या बाप का प्यार देना तो दूर पति बनने को भी आसानी से राज़ी नही है। इसलिए वह सेठ की दूसरी पत्नी बनना स्वीकार कर लेती है, जो उसको एक होटल में रखता है। और वह पुरुष का साथ पाने के लिए अन्य लोगों में से सम्बन्ध बना लेती है। विवाह के बाद दूसरे मर्दों से यौन वासनाओं की पूर्ति करना उसका ध्येय नही अपितु उसकी स्थिति की विवशता है। वह स्पष्ट कहती है कि - **"**मैं पुरुष का प्रेम चाहती हूँ, किसी भी शर्त पर किसी भी मूल्य पर। नही तो अकेली पड़ी मर जाऊँगी।**"128** मैडम का चरित्र न केवल आत्मसजग है, बल्कि स्त्री मन का इतना सटीक विश्लेषण कही और देखने को नही मिलता।

अतृप्त आकांक्षाओं को सामाजिक ढांचे के भीतर उदात बनाने की प्रक्रिया से गुजरती नारी पात्र है 'कितने सम्बन्ध' की मिसेज खन्ना। उसे अपनी उम्र से काफी बड़े विधुर पति से प्यार और सम्मान तो प्राप्त हुआ लेकिन कई यौवन सुलभ आकांक्षाएं अतृप्त ही रह गई। पड़ोस के एक नवविवाहित जोड़े में वह अपनी अधूरी इच्छाओं को पूरे होते पाती है। उसकी अतृप्त आकांक्षा उसे उस युवक के प्रति आकर्षित करती है। वह इस आकर्षण का कारण तो नही जानती लेकिन उससे सामाजिक रुप से स्वीकृत भाई का रिश्ता आजीवन राखी बाँधकर निभाती चली जाती है। समय गुजरने के साथ-साथ यौन अतृप्ति की अवचेतन में सुलगती आंच नही बिला जाती है और बच रहते है सहज मानवीय सम्बन्ध।

नारी की महत्वाकांक्षा को चित्रित करती कहानी है कि 'माँ'। नारी ने यदि महत्वाकांक्षा को जीवन में स्थान दिया है तो बदलते समाज में

संम्बधों में भी परिवर्तन आया है। आज माँ-बेटी सहेली बनकर रिश्तों को नया आयाम दे रही है। बेटी माँ की महत्वाकांक्षा को पिता की मौत का जिम्मेदार मानती है, कि फिर भी इस सच्चाई को उसी रुप में स्वीकार करती है जैसी कि वह है। वह माँ को उसकी आत्मग्लानि की मन:स्थिति से बाहर निकालती है। उसके सिर पर 'डाई' लगाती है तथा पिक्चर चलने का हठपूर्वक आग्रह करती है।

इस तरह कहा जा सकता है कि महीप सिंह मध्यमवर्गीय समाज में स्त्री-पुरुष संम्बधों के चितेरे है। उन्होंने सामाजिक, आधुनिक तथा मानवीय संम्बधों की जटिलता को अपनी कहानियों में बखूबी व्यक्त किया है। महीप सिंह के नारी पात्र 'स्व' की खोज में निरंतर संघर्षरत और अकेलापन, संत्रास और अजनबीपन झेल रहे है फिर भी उनमें जिजीविषा है और मूलभूत अच्छाई में उनकी आस्था बनी हुई है। ये नारी पात्र अपने अहं के प्रति भी सचेत है और विभिन्न संम्बधों के प्रति अपना उतरदायित्व भी निभाते चले जाते है। शायद इसी कारण वे नैतिक संकट में घिरे नजर आते है और दुविधाग्रस्त जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। इनकी कहानियों में नारी बहोत सारे रुपो में पात्र बनी है। इनकी विशेषता यह रही है तथा कुछ हद तक आत्मनिर्भर भी है।

*** निष्कर्ष**

इस तरह हम इस अध्याय में कह सकते है कि संसार के प्रारंभ से ही संसार की निर्माण और संचालन में नारी की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। हमारे प्राचीन में भी पुरुष और प्रकृति की कल्पना की गई है। यह प्रकृति यानी नारी। वह ही मानव जाति की सभ्यता एवं संस्कृति के विकास का मूल आधार मानी जाती रही है। स्त्री और पुरुष संसार के दो मूलभूत तत्व है। इनके सहयोग और समन्यव से ही संसार की रचना हुई है। नारी की

सृजनात्मक शक्ति के कारण ही गृह संस्था का जन्म हुआ तथा परिवार और समाज का विकास हुआ। पुरुष की तुलना में नारी का योगदान संसार की रचना में अधिक है। प्रजनन अथवा वंश वृद्धि प्राणियों का महत्वपूर्ण कार्य है। गर्भधारण से लेकर संतान का जन्म एवं उसके पालन-पोषण का कार्य नारी ही करती है। इसलिए नारी को संसार का आधार माना गया है। अत: नारी ने संसार के निर्माण में उसने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

वर्तमान समय में पिछले सौ वर्षो के अथक सामाजिक प्रयासों के कारण नारी ने सही रुप में अपना जीवन ढूँढ़ लिया है। घर से बाहर निकलकर स्वयं का आर्थिक आधार और सामाजिक पहचान प्राप्त करने लगी है। साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित संबंध होने के कारण नारी की बदली हुई स्थिति का अंकन साहित्य में भी हुआ है। साहित्य के केन्द्र में नारी रही है।

आशारानी व्होरा ने लिखा है कि - "पुरुष को प्रकृति ने शरीर बल अधिक दिया है तो स्त्री का दृढ़ता और शरीर सौदर्य अधिक। पुरुष संसार में जोश और साहस भरने के लिए बना है तो स्त्री धैर्य और चरित्र सिखाने के लिए, करुणा और प्रेम बरसाने के लिए। दोनों की भिन्न प्रकृति से ही परस्पर पूरकता और जीवन की पूर्णता संभव है।"**129** इस से यह कहा जाता है कि स्त्री और पुरुष दो विरोधी नही वरन् एक दूसरे के पूरक तत्व है।

डॉ.नरसिंह प्रसाद दुबे ने कहा है कि - "नारी प्रकृति का सुन्दर उपहार है और वह समान संस्कृति और साहित्य का महत्वपूर्ण अंग है, लेकिन पुरुष प्रधान व्यवस्था में नारी को सदैव भोगवस्तु माना है। पुरुष की तुलना में नारी अधिक मानवीय है। फिर भी मानव संस्कृति के भीतर

दो उप संस्कृतियाँ होती है। पुरुष उप संस्कृति और नारी उप संस्कृति। दोनों के सम्मिलित रुप से ही मानव संस्कृति बनती है। नारी की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है, जिसे मान्यता मिलना आवश्यक है। प्रतिष्ठा की समानता और शोषण से मुक्ति ही नारी की नारीत्व प्रदान करेगी। नारी पुरुष सता का विकल्प नही बल्कि एक साझा संस्कृति चाहती है। इसी चाहत ने नारीवादी दृष्टि को विकसित किया है।**"130**

संदर्भ ग्रंथ-सूची

(1) लेखक-अनुवाद-जवेरीलाल उमायाशंकर याज्ञिक, मनुस्मृति - पृ - 65

(2) मंगल कपपीकेरे, साठोतरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियाँ में नारी - पृ - 14

(3) डॉ.सौ मंगल कपपीकेरे, साठोतरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियाँ में नारी (महात्मा गांधी का उद्देश्य) - पृ - 14

(4) मैथिलीशरण गुप्त, द्वापर - पृ - 31

(5) डॉ.सौ मंगल कपपीकेरे, साठोतरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियाँ में नारी- पृ - 29

(6) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी : दशा और दिशा - पृ - 03

(7) डॉ. सौ मंगल कपपीकेरे, साठोतरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियाँ में नारी - पृ - 13

(8) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी :दशा और दिशा - पृ - 03

(9) डॉ.त्रिभुवनसिंह, हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद - पृ - 376

(10) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी :दशा और दिशा - पृ - 04

(11) राम आहूजा , भारतीय सामाजिक व्यवस्था - पृ - 83

(12) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी : दशा और दिशा - पृ - 05

(13) डॉ.जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास - पृ - 345-346

(14) डॉ.लता सिंहल, भारतीय संस्कृति में नारी - पृ - 22

(15) डॉ.शशि अवस्थी, प्राचीन भारतीय समाज - पृ - 194

(16) वहीं - पृ - 198

(17) डॉ.पी. वी. कांणे, धर्म शास्त्र का इतिहास भाग 2 - पृ - 443

(18) श्री बजवललभरण जी वेदान्ताचार्य, नारी अंक में लेख 'उपनिषदो में नारी' - पृ - 15

(19) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी : दशा और दिशा - पृ - 07

(20) राम आहूजा, भारतीय सामाजिक व्यवस्था - पृ - 81

(21) वहीं - पृ - 83

(22) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी :दशा और दिशा - पृ - 07

(23) राधा कुमार, स्त्री संघर्ष का इतिहास - पृ - 24

(24) विपिन चन्द्र, आधुनिक भारत - पृ - 160

(25) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी :दशा और दिशा - पृ - 08

(26) प्रभा खेतना, स्त्री विमर्श के अंतविरोध, - पृ - 57

(27) अरविन्द जैन, लीलाधर मडलोई स्त्री मुक्ति का सपना - पृ - 45

(28) मृणल पाण्डे, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक - पृ - 129

(29) प्रभा खेतना, हंस जनवरी, 1997- पृ - 83

(30) डॉ.कुँवरपाल सिंह, हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक चेतना - पृ - 17

(31) डॉ.पी. आर. बहमंद, फीचेस जनरल बम्बई, 19,मार्च 1985

(32) रामचन्द्र ओझा, हंस, फरवरी 2002- पृ - 54

(33) मैत्रेयी पुष्प, हंस, सितंबर 2005- पृ - 76

(34) मृणाल पांडे, परिधि पर स्त्री - पृ - 27

(35) स्मिता तिवारी, मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में सामाजिक चेतना- पृ - 101

(36) डॉ.शशि भूषण सिंहल, हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियों - पृ - 13

(37) मैकाईवर एवं चालसॅ एच. पेज, हिन्दी अनुवाद जी विखेशवरया समाज - पृ - 05

(38) किरणबाला अरोड़ा, साठोतरी हिन्दी उपन्यासों में नारी - पृ - 35

(39) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी :दशा और दिशा - पृ - 19

(40) बाबू गुलाबराय, भारतीय नारी : दशा और दिशा - पृ - 19

(41) हजारी प्रसाद द्विवेदी, अशोक के फूल - पृ - 67

(42) गोविंद चातक, संस्कृति समस्या और संभावना - पृ - 221

(43) Ralph Paddington, an introduction to social anthropology - p 03,04

(44) डॉ.शीलप्रभा वर्मा, महिला उपन्यासकारों की रचनाओं में बदलते सामाजिक संदर्भ - पृ - 176

(45) जवरीमलल पारख का लेख, धमॅ और मीडिया - पृ - 90

(46) अखिलेश मिश्र, धर्म का मर्म - पृ - 43

(47) आशारानी व्होरा, भारतीय नारी :अस्मिता का अधिकार - पृ - 126

(48) राधा कमल मुखर्जी, भारत की संस्कृति और कला - पृ - 356

(49) मृणाल पांडे, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीतिक तक - पृ - 84

(50) डॉ.महेन्द्र भटनागर, प्रेमचंद समस्यामूलक उपन्यासकार - पृ - 183

(51) प्रेमचंद, प्रेमाश्रम - पृ - 169

(52) क्षमा शर्मा, औरतों और आवाज़े - पृ - 46

(53) मन्नू भंडारी, मैं हार गई - पृ - 40

(54) प्रभा खेतना, स्त्री विमर्श के अन्तरविरोध - पृ - 27

(55) अरविंद जैन, लीलाधर मंडलोई, स्त्री मुक्ति का सपना - पृ - 45

(56) चटर्जी पारथा, दि नेशन एण्ड इट्स वोमैन - पृ - 133

(57) मृणाल पांडे, स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक - पृ - 82

(58) मन्नू भंडारी, मैं हार गई - पृ - 40

(59) डॉ.सियाराम, स्त्री विमर्श के विविध संदर्भ - पृ - 27

(60) वहीं - पृ - 45

(61) के. पी. सक्सेना, लखनवी ढंग से - पृ - 31

(62) हरिशंकर परसाई, तुलसीदास चन्दन धिसैं - पृ - 59

(63) राजेन्द्र यादव, आदमी की निगाह में औरत - पृ - 15

(64) वहीं - पृ - 15

(65) संकलनकर्ता, माईदयाल जैन, गांधी विचार रत्न - पृ - 151

(66) मृणाल पांडे , स्त्री देश की राजनीति से देश की राजनीति तक - पृ - 14

(67) महात्मा गाँधी, मेरे सपनों का भारत - पृ - 188

(68) जोन स्टुअर्ट मिल, अनु. प्रगति सक्सेना, स्त्रियों की पराधीनता - पृ - 27

(69) सिमोन द बोउवार, अनु. डॉ.प्रभा खेतना, स्त्री उपेक्षिता - पृ - 305

(70) वहीं - पृ - 21

(71) मेरी वोलसटनकाफट, अनु. मिनाक्षी, स्त्री अधिकारों का औचित्य साधन - पृ - 47

(72) जोन स्टुअर्ट मिल, अनु. प्रगति सक्सेना, स्त्रियों की उपेक्षिता - पृ - 117

(73) महात्मा गाँधी, मेरे सपनों का भारत - पृ - 190

(74) सिमोन द बोउवार, अनु. डॉ.प्रभा खेतना, स्त्री उपेक्षिता - पृ - 117

(75) महादेवी वर्मा, शृंखला की कलियाँ - पृ - 20

(76) संकलनकर्ता-माईदयाल जैन, गांधी विचार रत्न - पृ - 155

(77) सिमोन द बोउवार , अनु. डॉ.प्रभा खेतना, स्त्री उपेक्षिता - पृ - 23

(78) विनोबा, स्त्री-शक्ति, जागरण - पृ - 34

(79) जोन स्टुअर्ट मिल, अनु. प्रगति सक्सेना, स्त्रियाँ की पराधीनता - पृ - 25

(80) सिमोन द बोउवार, अनु. डॉ.प्रभा खेतना, स्त्री उपेक्षिता - पृ - 22

(81) वहीं - पृ - 149

(82) वहीं - पृ - 19

(83) डॉ.सौ मंगल कपपीकेरे, साठोतरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी - पृ - 56

(84) डॉ.नर नारायण राय, नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल की नाट्य साधना - पृ - 17

(85) डॉ.मीना पंड्या, साठोतरी हिन्दी नाटकों में नारी की दशा और दिशा - प्रवेशिका

(86) डॉ.सरजू प्रसाद मिश्र, नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल - पृ - 16

(87) डॉ.भूपेन्द्र कलसी कलसी, प्रसादोतर कालीन नाटक - पृ - 119

(88) बजेनद्रनाथ पांडेय, भारतेन्दुकालीन व्यंग्य परम्परा - पृ - 62,64

(89) डॉ.मीना पंड्या, साठोतरी हिन्दी नाटकों में नारी की दशा और दिशा - पृ - 23,24

(90) वहीं - पृ - 24

(91) वहीं - पृ - 25

(92) वहीं - पृ - 26

(93) प्रभा आपटे, भारतीय समाज में नारी, - पृ - 226

(94) डॉ.मीना पंड्या, साठोतरी हिन्दी नाटकों में नारी की दशा और दिशा - पृ - 28

(95) प्रभा आपटे, भारतीय समाज में नारी - पृ - 54

(96) डॉ.मीना पंड्या, साठोतरी हिन्दी नाटकों में नारी की दशा और दिशा - पृ - 31

(97) प्रभा आपटे, भारतीय समाज में नारी - पृ - 35

(98) डॉ.मीना पंड्या, साठोतरी हिन्दी नाटकों में नारी की दशा और दिशा - पृ - 32

(99) डॉ.नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ - 410

(100) वहीं - पृ - 409

(101) डॉ.विनोद कालरा, स्त्री सशक्तीकरण - पृ - 95

(102) वहीं - पृ - 96

(103) डॉ.नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, - पृ - 411

(104) वहीं - पृ - 505

(105) वहीं - पृ - 507

(106) डॉ.विनोद कालरा, स्त्री सशक्तीकरण - पृ - 103

(107) भूपेन्द्र कलसी, प्रसादोतर कालीन नाटक - पृ - 23

(108) डॉ.मीना पंड्या, साठोतरी हिन्दी नाटकों में नारी की दशा और दिशा - पृ - 19

(109) डॉ.रमेश गौतम, भारतेन्दु युगीन नाटक - पृ - 16

(110) डॉ.रमेश गौतम, हिन्दी नाट्यकर्म दृष्टि और सृष्टि - पृ - 12

(111) डॉ.सोमनाथ गुप्त, हिन्दी नाट्य साहित्य का इतिहास - पृ - 78

(112) डॉ.नगेन्द्र, आस्था के चरण - पृ - 442

(113) डॉ.सोमनाथ गुप्त, हिन्दी नाट्य साहित्य का इतिहास - पृ - 245

(114) भूपेन्द्र कलसी, प्रसादोतर कालीन नाटक - पृ - 144

(115) वहीं - पृ - 149

(116) डॉ.रामदशन मिश्र, हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष - पृ - 40

(117) डॉ.अमर ज्योति, महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में नारीवादी दृष्टि - पृ - 33

(118) उमाशंकर चौधरी, अयोध्या बाबू सनक गये हैं, कहानी संग्रह - पृ - 126

(119) डॉ.विनोद कालरा, स्त्री सशक्तीकरण - पृ - 148

(120) वहीं - पृ - 91

(121) वहीं - पृ - 130

(122) वहीं - पृ - 130

(123) वहीं - पृ - 131

(124) वहीं - पृ - 86

(125) वहीं - पृ - 86

(126) डॉ.कमलेश सचदेव, करक कलेजे माहि - पृ - 183

(127) वहीं - पृ - 184

(128) वहीं - पृ - 187

(129) प्रा.रवीन्द्र ठाकरे, प्रथम दशक के हिन्दी साहित्य की स्त्री एवं दलित विमर्श - पृ - 20-21

(130) वहीं - पृ - 20